राष्ट्रभाषाभूषण

'जयतां राष्ट्रभाषेयं हिन्दी भारतभारती'

श्रीगोपालप्रसाद शास्त्री

राष्ट्रभाषा-तरंग, १म संख्या

ॐ श्रीकृष्णः शरणं मम ।

राष्ट्रभाषाभूषण ।

"राजता राष्ट्रभाषेय हिन्दी भारतभारती ।"

लेखक,—

श्रीगोपालप्रसाद शास्त्री ।

संवत् १९७७, विक्रमीय ।

प्रथमावृत्ति] [मूल्य ।=)

प्रकाशक,
श्रीगोपालप्रसाद शास्त्री
दर्शनसमिति
डिगिया, काशी ।

मुद्रक,
ग. कृ. गुर्जर,
श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस,
बनारस सिटी ।

समर्पण

देश, धर्म, समाजके सच्चे सेवी, हिन्दीके अनेकानेक
उच्च ग्रन्थोंके प्रणेता, नीतिशास्त्र, इतिहास-
विज्ञान और समाजतत्त्वके मार्मिक ज्ञाता,
काशीस्थ हरिश्चन्द्र हाई स्कूलके
भूतपूर्व हेड मास्टर

श्रीमान् पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० की

शुभ सेवामें,—

महोदय,

बहुत दिनों तक आपके साथ सहवास होनेके कारण आपकी अतुलनीय कर्मण्यता, अद्भुत जातीय अभिमान, अपूर्व राष्ट्रसेवा, अनुपम साहित्य-हितैषिता, अदृष्टपूर्व सत्त्ववृत्ति और असम्भवनीय विद्याव्यासङ्ग आदि दिव्य गुणावली देखकर मैं अतीव मुग्ध हुआ हूँ। इसलिये यह क्षुद्र कृति आपकी सेवामें सानुराग सादर समर्पित है।

श्रीगोपालप्रसाद शास्त्री।

दो शब्द ।

—:*:—

इस छोटीसी पुस्तकके लेखक साहित्याचार्य, न्यायतीर्थ. व्याकरणशास्त्री पं० गोपालप्रसाद शास्त्रीका, हिन्दी-साहित्यके व्याकरणमें, यह प्रथम प्रयास-प्रवेश है; इसलिये आपके और आपकी पुस्तकके विषयमें दो शब्द लिखना आवश्यक है।

शास्त्रीजी संस्कृत-साहित्यके एक प्रसिद्ध विद्वान् और विख्यात व्याख्याता हैं। आपका संस्कृत-भाषण सुनकर बड़े २ विद्वान् चकित-चमत्कृत हो जाते हैं। पौरस्त्य चिन्ताओं-कल्पनाओंके पूर्ण परिज्ञाता होकर भी शास्त्रीजी नयी रोशनी-की चकाचौंधसे पूरे परिचित हैं। साथ ही आप उस दलसे 'बरी' हैं, जो राष्ट्रभाषाको "भाखा" कहकर दिल्लगी उड़ाता है!

मेरा पक्का ख्याल है कि, किसी भी भाषाका योग्य विद्वान ही हिन्दीका उदीयमान लेखक हो सकता है। विना किसी उदात्त साहित्यका मर्म जाने हिन्दीमें तर्क, कल्पना और चिन्ताका ग्रन्थ कोई लिख नहीं सकता। बहुत लोग कहते हैं कि, प्राकृतिक स्तरोंका (पर्दोंका) अनुभविता ही अच्छा साहित्य-लेखक हो सकता है। परन्तु यह ख्याल रहे कि. इसके लिये भी अनुभवका प्रधान साधन साहित्य ही है। फिर भी, इसमें तो, सन्देह ही नहीं कि, अन्य भाषाओंके योग्य विद्वानोंकी लेखनीकी शोभा-सुषमा कुछ स्वर्गीय ही होती है।

शास्त्रीजी इन्हीं योग्य विद्वानोंमें हैं। बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि, आप राष्ट्रभाषाके सेवा-क्षेत्रमें अवतीर्ण हुए हैं। आपकी

ही तरह यदि संस्कृतके कुछ प्रतिभाशाली विद्वान् हिन्दीपर दया करें तो, इसके उत्थानमें, इसके सेवियोंको, यथेष्ट साहाय्य मिले।

यों तो इस ग्रन्थका गुण-दोष-परीक्षण पाठकोंपर ही अवलम्बित है; पर इतना मैं अवश्य कहूँगा कि, इसमें कुछ विशेषता है। इस लघु पुस्तिकामें आधुनिक खड़ी बोलीके व्याकरणका आलोचनात्मक वर्णन है। इस विषयके हिन्दीमें अनेक ग्रन्थ हैं। किन्तु कुछ हिन्दीका प्रगाढ़ पाण्डित्य प्रदर्शित करनेके लिये अतीव विस्तृतरूपसे लिखे गये हैं और कुछ साररूप होकर भी पक्षपात-भारसे लदे हैं। प्रथम श्रेणीके ग्रन्थोंका मर्म समझनेके लिये अत्यधिक समय, श्रम और विद्याबल अपेक्षित है और दूसरी कोटिके ग्रन्थोंमें, एकदेशीयता होनेके कारण, सत्य-निर्णयमें कठिनता होती है। इन दोनोंका अभाव ही इस पुस्तककी विशेषता या विलक्षणता है। इसके सिवा इस ग्रन्थकी लेख-शैली और विषय-निर्वाचन-क्रम भी स्वाधीन चिन्ता और स्वतन्त्ररूपसे बहुत ही उत्तम हुआ है। वस्तुतः शास्त्रीजीने पक्षपात-रहित होकर संक्षेपसे, सुष्ठु-सरल भाषामें, व्याकरणगत सिद्धान्तोंका स्पष्टीकरण, बड़ी ही खूबी-के साथ, किया है। अन्तमें रचना-शैलीके नियमों और कुछ उत्तमोत्तम कहावतोंका संग्रह भी किया है, जिससे विद्यार्थियों-को यथेष्ट लाभ हो सकता है। हिन्दी-सेवियोंको ऐसे ग्रन्थका, अधिकाधिक मात्रामें, आदर करना चाहिये।

जन्माष्टमी, १९७७ विक्रमीय
बेटावर, गाजीपुर।

रामगोविन्द त्रिवेदी।

उपक्रम।

इस विशाल ब्रह्माण्डमें कालकी भी महिमा अनोखी है। इसीकी दयासे जहाँ वैदिक युगमें देव-भाषा संस्कृतने अकण्टक राज्य किया था, वहीं कुछ शताब्दियों तक प्राकृतने अपना अधिकार जमाया। बाद, भारतके दुर्दैवने अपना पट-परिवर्तन किया: विदेशी सम्राट् यहाँ पधारने लगे! फिर क्या था, इस देशके भाव, भाषा और भेषमें विलक्षण परिवर्त्तन आरम्भ हुआ। छोटे २ राजा-महाराजा इस पवित्र भूमिको खण्डशः करके अपने मनमाने अधिकार जमाने लगे। इस प्रकार इस देशकी राष्ट्र-भाषा विनष्टसी हो गयी।

आज काल-चक्रके परिवर्तनसे राष्ट्र-भाषाके नाशका भीषण फल लोग समझने-भोगने लगे हैं। भारतका भाग्य फिर पलट गया है। जो लोग बेसोचे-समझे, आँखें बन्द कर, विदेशी भाषाके पक्षपाती थे; आज वे भी एक राष्ट्र-भाषा बनानेके लिये प्राण-पणसे उद्योग कर रहे हैं। इस स्थान पर लोग हिन्दीको बिठाना चाहते हैं। यह अतीव प्रसन्नताकी बात है; और, यह कालचक्रका विचार राष्ट्रका अभ्युदय-सूचक है।

पर मैं देखता हूँ कि, देशमें जहाँ दिन दूनी रात चौगुनी विविध विषयोंकी प्रगति हो रही है: वहाँ राष्ट्र-भाषा हिन्दीकी, जैसी चाहिये, वैसी उन्नति नहीं होती। अभी उसके साहित्यमें

बहुतसी त्रुटियाँ रह गयी हैं। दर्शन, विज्ञान, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि शास्त्रोंका तो, हिन्दीमें एकदम अभावसा ही है। इसका कारण यही है कि, हिन्दी-जगत्में विद्वान् लेखकोंकी बड़ी कमी है। अंग्रेजीके विद्वानोंमेंसे कुछ तो, यों ही इससे उदासीन रहते हैं और कुछ हिन्दीके अक्षरोंसे भी परिचय नहीं रखते! संस्कृतके विद्वानोंमेंसे कुछ लोग हिन्दी पढ़ना-लिखना अपमान समझते हैं और कुछ, जो लेखक हैं वे, उँगलियों पर गिने जा सकते हैं। संस्कृतके छात्रोंमें भी मैं नहीं देखता कि, ये लोग हिन्दीजगत्में कुछ काम कर सकेंगे; क्योंकि, इनकी शिक्षा-दीक्षा एक निराले ढङ्गसे हो रही है, जिससे ये लोग देश, काल, राजनीति, राष्ट्र-सङ्गठन, भारतोत्थान आदि विषयोंमें बिलकुल अपरिचित रखे जा रहे हैं। यही हालत आधुनिक अंग्रेजी पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी भी हो रही है। वे भी डिग्रियोंके फन्देमें पड़कर हिन्दीको छोड़ते जा रहे हैं।

विशेषतः इन्हीं संस्कृत और अंग्रेजीके विद्यार्थियोंके लिये मैंने संक्षेपमें यह छोटीसी पुस्तक लिखी है, जिससे थोड़े समयमें और थोड़ीसी मिहनतसे ये लोग विशुद्ध हिन्दी बोल और लिख सकें। मैं नहीं कह सकता कि, अपने ध्येयमें कितनी सफलता प्राप्त कर सकूँगा।

यद्यपि हिन्दीमें इस तरहके अनेक ग्रन्थ हैं; परन्तु उनमेंसे कुछमें तो पक्षपातसे काम लिया गया है और कुछमें विशेष विस्तार है। इन दोनों तरहके ग्रन्थोंको पढ़नेके लिये बहुत ही

समय और परिश्रमकी आवश्यकता है। पर विद्यार्थियोंके लिये, और लोगोंकी अपेक्षा, समय अत्यन्त मूल्यवान् है तथा पाठ्यसे दूसरी तरहके ग्रन्थोंमें अधिक परिश्रम करना उनकी स्थितिके सर्वथा प्रतिकूल और हानिकर है। इसलिये मैंने इस विषयके अनेक ग्रन्थोंका अवलोकन कर इसे अधिकतर विद्यार्थियोंके लिये उपयोगी बनानेकी यथेष्ट चेष्टा की है।

महोपदेशक पं० रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्रीने इस ग्रन्थके संशोधन आदि कार्योंमें मुझे पूरी सहायता दी है: इसलिये मैं आपको अनेकानेक हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। पं० ऋषिदेव मिश्र वेदान्तरत्न महाशयने इस ग्रन्थके लिङ्ग-निर्णय-प्रकरणमें बहुत साहाय्य किया है: इसलिये आपका भी मैं कृतज्ञ हूँ। कई स्थानों पर "देशदर्शन" से इसमें वाक्य उद्धृत किये गये हैं; इसलिये इसके लेखक भी मेरे सातिशय धन्यवाद-पात्र हैं।

जन्माष्टमी, १९७७,
दर्शनविद्यालय, काशी।

श्रीगोपालप्रसाद शास्त्री।

विषय-सूची ।

—:*:—

राष्ट्रभाषाभूषण ।

विषय-प्रवेश ।

—:*:—

आज कल हिन्दीसंसारमें बड़ी गड़बड़ी मच रही है "मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना" की कहावत चरितार्थ हो रही है। कोई विभक्तियोंको शब्दोंसे अलग लिखता है तो, कोई साथ ही लिखता है। कोई "गया" में "य" लिखकर "गयी" में "ई" लिखता है तो, कोई संस्कृतके शब्दोंकी भरमार करता है दूसरे फ़ारसी शब्दोंके पुछल्ले लगाते है। एक अनुस्वारके पक्ष पाती है तो, अन्य चन्द्रबिन्दुके। इसी प्रकार किसी लेखमें देखिये तो, विरामचिन्ह अधिक मात्रामें प्रयुक्त हैं और किसी के लेखमें सिवा पूर्ण विरामके दूसरे चिन्होंका दर्शन ही नहीं होता! कहीं जो एक शब्द स्त्रीलिङ्गमें प्रयुक्त हो रहा है, वही दूसरी जगह पुँल्लिङ्गमें किया जा रहा है! किसी तरफसे 'भाषा सरल होनी चाहिये' की आवाज आ रही है तो, दूसरे कहते हैं कि, 'नहीं, कठिन होनी चाहिये।' किसीकी राय है कि, 'व्याकरणके पीछे ज्यादा नहीं पड़े रहना चाहिये' तो दूसरे फर्माते हैं कि, 'नहीं, व्याकरणकी सुश्रृङ्खलासे ऐसे जकड़ो कि, वह भागने न पावे' इत्यादि। अब ऐसी हालतमें क्या करना चाहिये? मेरे ख्यालसे तो, जबतक हिन्दीकी कोई एक

मान्य शैली नियत नहीं होती है तबतक यह गड़बड़ी रहेगी ही। परन्तु सौभाग्यकी बात है कि, काशीकी "नागरीप्रचारिणी सभा" ने इन विषयोंपर विचार करके एक वृहत् व्याकरण और कोष बनाना प्रारम्भ कर दिया है । सम्भव है कि, इससे यह गड़बड़ी मिटे और बहुत कुछ हिन्दी-जगत्‌का लाभ हो । तबतक हिन्दीके सुयोग्य विद्वानोंको पुस्तक या लेख द्वारा इन विषयोंपर स्वतन्त्र विचार प्रकट करना उचित है ।

——:o:——

विभक्ति-प्रयोगमें मतभेद ।

जो महाशय शब्दोंसे विभक्तियोंको अलग लिखते हैं, उनकी यह दलील है कि, जैसे इंग्लिशमें विभक्तियाँ अलग होती हैं; वैसे ही हिन्दीमें भी रहें ।

It is a Statue of Lokmanya Tilak (यह लोकमान्य तिलककी प्रतिमा है) । यहाँ Lokmanya Tilak शब्द अलग है और of (विभक्ति) अलग है । बस, जैसे यहाँ शब्दसे विभक्ति स्वतन्त्र है, उसी प्रकार हिन्दीमें भी हो । परन्तु राष्ट्रीय विचारसे देखा जाय तो, यह रीति भारतवर्षके लिये लागू नहीं है । मेरे मतसे अपनी जननी संस्कृतका अनुकरण करनेमें ही हिन्दीकी राष्ट्रीयता है । संस्कृतमें विभक्तियाँ एक साथ ही रहती हैं । "इयं लोकमान्यस्य प्रतिकृतिः ।" यहाँ "लोकमान्य" शब्दसे "स्य" विभक्ति अलग नहीं लिख सकते । जहाँ तक हो, हिन्दीमें इसी रीतिका प्रचार होना चाहिये ।

बहुत लोग यह भी कहते हैं कि, यदि शब्दोंसे विभक्तियाँ स्वतन्त्र नहीं होतीं तो, "आपहीको देखा," "उन्हींने कहा" और "वह घरमेंसे आये" इत्यादि वाक्योंमें कहीं विभक्तिके

पहले ही दूसरा शब्द लग जाना और कहीं दो २ विभक्तियोंका रहना कैसे सम्भव होता ? पर मेरे ख्यालसे विकृत रूपमें प्रचलित ऐसे २ दो चार वाक्योंको देखकर सिद्धान्त-निर्णय नहीं होता। "आपको ही देखा", "उनने ही कहा" आदिके स्थलमें ही पूर्वोक्त विकृत वाक्य हैं। "घरसे आये" की जगह घरमेंसे आये आदि वाक्य भी रूढ़ि-प्रकृतिमें लाकर अशुद्ध रूपमें बोले जाते हैं। यह सब गोल-माल भी विदेशी भाषाओंके संसर्गसे ही हुआ है। वस्तुतः शब्द और विभक्तिका तो, ऐसा समवाय-सम्बन्ध है कि, "पुस्तक पढ़ी" आदि वाक्योंमें कर्म आदिकी विभक्तियाँ शब्दोंमें ही लीन हैं। फिर विभक्तियाँ स्वतन्त्र कैसे ? दूसरी बात यह है कि, विभक्तियोंके अलग रखनेसे व्यर्थ पुस्तकमें जगह भी अधिक लगती है। एक बात और है: यह कि, जिस भाषासे हमारे जीने-मरनेका सम्बन्ध है, जिस भाषाके भावों-विचारोंसे हमारे मज्जा-मांसका सम्बन्ध है, उसी संस्कृतके अनुकरणपर हम अपनी हिन्दीकी साहित्य-रचना करें तो, बंगला आदिकी तरह इसका भी शीघ्र ही उदय हो सकता है।

——:※:——

क्रिया-रूपोंमें मतवाद।

गयाकी "गयी" और लियाके "लिये" आदि प्रयोगोंमें 'ई' और 'ए' लिखनेवाले दलील पेश करते हैं कि, हमको केवल मात्राएँ ही लिखनी पड़ती हैं और आपको मात्रा तथा 'य' अक्षर भी। परन्तु विचारनेपर मालूम होगा कि, आपको भी हमारे ही समान हाथ घुमाना पड़ता है। दूसरी बात यह है कि, आप उच्चारण तो, करें य के साथ ई और ए का: परन्तु लिखें केवल

ई और ए ! यह ठीक नहीं । इसके सिवा व्याकरणके नियमानुसार यह सोलहो आने अनुचित रीति है कि, गयामें य लिखकर गयी या गयेमें य छोड़ दें । ऐसे ही अशुद्ध प्रयोगोंके प्रचारसे हुआमें आ लिखकर भी लोग इसके बहुवचन रूप हुएकी जगह 'हुये' लिखते हैं ! बहुत लोग तो, 'हुवे' भी लिखते हैं ! इसलिये जैसी सामान्य क्रिया गया, किया, हुआ आदि लिखें, उसी प्रकार, व्याकरणके अनुसार, उनके गयी, लिये, हुई, हुए आदि शुद्ध रूप भी रखें ।

बहुत लोग रखना और सकना धातुओंके रक्खा, रक्खी, सक्का, सक्की आदि रूप भी लिखकर बहुत ही गड़बड़ करते हैं । भला रखना धातुके भूत-कालके रूपोंमें क् कहाँसे टपक पड़ता है ? फिर, यदि वर्तमान कालमें 'रक्खता' है आपके अनुयायी लिखने लगें, तब आप क्या उत्तर देंगे ? सक्का सक्कीमें ककारका अकार कहाँ उड़ जाता है ? ऐसा ही लिखना है तो, सक्कना धातु ही क्यों नहीं गढ़ लेते ? कुछ लोग जवाब देते हैं कि, उच्चारणके अनुसार ही रक्खा आदि रूप लिखे जाते हैं । अच्छा, तो फिर, बहुत लोग तो, स्थायी और दायीके य का उच्चारण ही नहीं करते तो, क्या इनके स्थाई, दाई रूप ही आप लिखेंगे ? कभी नहीं । इसलिये रक्खा, रक्खी, सक्का, सक्की न लिखकर रखा, रखी, सकना, सकती लिखना उचित है ।

-:*:-

भाषाकी मौलिकता ।

हिन्दीमें संस्कृत-फारसी शब्दोंकी भरमार करना उचित नहीं; क्योंकि, हिन्दीकी भी कुछ मौलिकता रहनी चाहिये । विना कुछ निजकी मौलिकताके भाषा स्थिर नहीं रहती । यह सम

झना ठीक नहीं कि, संस्कृत आदिकी विभक्तियोंको हटा देना ही हिन्दी है। आजकल हिन्दीमें कुछ ऐसे संस्कृत-बहुल ग्रन्थ निकल रहे हैं कि, यदि आप संस्कृतके अच्छे विद्वान् हैं तब तो, कुछ उनका अर्थ लगा लीजिये; नहीं तो, पुस्तक खरीदकर दर्शन किया कीजिये; वह समझमें आनेकी नहीं। भला वैसी किताबोंसे क्या फायदा, जब कि, उनसे साधारण-जनताको कुछ लाभ ही नहीं! यही हाल फारसीके पुछल्ले जोड़नेवालोंका भी है। फारसीवाले भी एक प्रकारसे हिन्दीकी उन्नतिमें बाधक हो रहे हैं। मुसलमान भाई भी भारतवासी हैं। वे भी अब हिन्दुस्थानी हो गये हैं। हिन्दुस्थानकी भलाई-बुराईसे उनकी भी भलाई-बुराई है। अतः अब उनको और फारसीके पक्षपाती हिन्दुओंको भी राष्ट्रभाषामें अप्रचलित फारसी शब्दों-को नहीं मिलाना चाहिये। विभिन्न भाषाओंके शब्दोंकी हिन्दी-में भरमार करनेसे राष्ट्रभाषाकी मौलिकताके नाशके साथ ही एक और भी भारी हानि होती है। वह यह है कि, यदि कोई विदेशी मनुष्य हिन्दी पढ़ना चाहेगा तो, उसको हिन्दी-साहित्यके व्याकरण-काव्यके अध्ययनके साथ ही संस्कृत, फारसी, उर्दू और अंग्रेजी आदि भाषाओंके व्याकरण-काव्य का भी अध्ययन करना पड़ेगा! इस तरह वह हिन्दीसे पराङ्-मुख हो जायगा। हाँ, जो अन्य भाषाओंके शब्द हिन्दीमें पूर्ण प्रचलित हैं, उन्हें निकालनेकी भी जरूरत नहीं; क्योंकि, वे अब हिन्दीके 'निजी' शब्द हो गये हैं। इसलिये मेरी समझमें महात्मा गान्धीकी राय बहुत अच्छी है कि, "न इधर संस्कृत-शब्दोंकी ही भरमार होनी चाहिये और न उधर फारसी शब्दोंकी। हिन्दी, हिन्दुस्तानीमें कोई भेद नहीं है। जो प्रचलित शब्द हैं, वे सदा व्यवहारमें चलते रहें।"

मेरी जहाँ तक समझ है कि, भाषा सरल-सादी होनी चाहिये। जैसी भाषा आप बोल-चालमें रखते हैं, वैसी ही लिखनेमें भी रखें। इसीसे भाषाकी उन्नति होती है और पढ़नेवालेकी भी रुचि बढ़ती है। हाँ, दार्शनिक और वैज्ञानिक आदि कठिन विषयोंको लिखते समय कुछ कठिन शब्दोंका प्रयोग करना ठीक हो सकता है; परन्तु वे भी विशेष सामासिक न रहें। जहाँ तहाँ अलङ्कार भी होना चाहिये; पर शब्दालङ्कार और शब्दाडम्बर ज्यादा न हो। शब्दालङ्कारमें एक अनुप्रास है, जो सभीको प्रिय होता है। उसे जहाँ तहाँ व्यवहारमें लाना अनुचित नहीं।

चन्द्रविन्दु और अनुस्वार।

हिन्दीमें उच्चारणके ख्यालसे देखा जाय तो, प्रायः अधिक स्थानों पर चन्द्रविन्दुका ही भान होता है। अतः उच्चारण पर ध्यान देकर लिखना चाहिये; और, हिन्दी व्याकरणसे चन्द्रविन्दु लिखना ही शुद्ध भी है। मैं, हैं, पुस्तकें आदिमें स्पष्ट चन्द्र-विन्दुका ही उच्चारण होता है; परन्तु सुभीतेके लिये लोग अनुस्वार ही लिखते हैं।

यदि एक पदमें अनुस्वारका उच्चारण मालूम हो तो, उसे आगेके वर्गीय अक्षरके अनुसार पञ्चम अक्षर कर देना चाहिये। जैसे,—वङ्किमचन्द्र, गङ्गा, कन्धा, चञ्चल, ठण्ढा, छाञ्छ, पञ्जाब, झञ्झा, दण्ड, तन्तु, मन्थर, धन्धा, पम्पा, बम्बई, बम्भोला, सन्नाटा, मम्मट इत्यादि।

चिन्ह और लिङ्गका उल्लेख।

आगे चलकर चिन्हों और लिङ्गोंके बारेमें अलग २ दो प्रकरण ही लिखे जायँगे। उनसे मालूम हो जायगा कि, कहाँ किस चिह्न और लिङ्गका व्यवहार करना चाहिये। चिन्होंका व्यवहार तो, बड़ा ही उपयोगी होता है; क्योंकि, उससे लेख-का सारा भाव साफ़ २ मालूम हो जाता है।

व्याकरणका बोझ।

भाषाको स्थायी रखनेके लिये व्याकरणका ज्ञान बड़ा ही आवश्यक है। पर ऐसा नहीं कि, उसे व्याकरणके नियमों-में ऐसा जकड़ दीजिये कि, वह पङ्गु होकर एक कोनेमें बैठ जाय। जैसी आजकल संस्कृत-भाषाकी दुर्दशा हो गयी है। संस्कृतमें एक एक शब्द पर हम लोग वर्षों लड़ते रह जाते हैं; पर शास्त्रार्थ नहीं समाप्त होता। संस्कृतके विद्या र्थियोंको व्याकरणके झगड़ेसे इतनी फुरसत ही नहीं मिलती कि, वे दूसरा शास्त्र पढ़ें! यही वैयाकरण विद्वानोंकी भी दशा है। वे व्याकरणके जालसे इतना अवकाश नहीं पाते कि, दुनियामें क्या हो रहा है, यह जानें! वे अभी "अर्द्ध-मात्रालाघवेन वैयाकरणाः पुत्रोत्सवं मन्यन्ते" के चक्करमें ही पड़े हैं! उन्हें यह मालूम ही नहीं है कि, 'यह बीसवीं शताब्दी है; इसमें बड़े २ चाणक्यके चाचे पड़े हैं। हम लोग यदि इनसे सामना नहीं करते हैं तो, कुछ ही दिनोंमें हमारा नाम-निशान भी मिट जायगा।' इसलिये व्याकरणका बोझ तभी तक होना चाहिये, जब तक हम भाषा शुद्ध २ बोल-लिख न सकें।

इसलिये इस पुस्तकमें व्याकरणके नियम बहुत ही संक्षेप-

में, सार-रूपसे, दिये गये हैं, जिससे थोड़े ही समयमें विद्यार्थियोंको हिन्दीके सब अङ्गोपाङ्ग विदित हो जायँ ।

सम्बन्धकारक और आकारान्त विशेषण ।

१—यदि सम्बन्धी और विशेष्य विभक्तिरहित पुँल्लिङ्ग एकवचन हों तो, सम्बन्धकारकके चिन्ह तथा आकारान्त विशेषण ज्यों के त्यों रहते हैं । जैसे,—मेरा बड़ा घोड़ा कहाँ है ?

२—यदि सम्बन्धी और विशेष्य स्त्रीलिंग हैं तो, सम्बन्धकारकके चिन्ह और विशेषणमें ईकार हो जाता है । जैसे,—उनकी बड़ी बहन विदुषी हैं ।

३—यदि सम्बन्धी और विशेष्य पुँल्लिङ्ग बहुवचन, पुल्लिङ्ग-विभक्तिसे युक्त एकवचन और पुँल्लिङ्ग आदरणीय विभक्तिसे शून्य एकवचन रहें तो, एकार हो जाता है । जैसे,—रामके बड़े घोड़े आये हैं । अपने छोटे छातेसे मारो । आपके बड़े चाचाजी आये हैं ।

४—यदि कोई अव्यय तथा योग्य, अधीन, ऊपर, नीचे आदि शब्द रहें तो, सम्बन्धकारकका चिन्ह ए हो जाता है । जैसे,—मेरे यहाँ आओ । उनके योग्य यह काम है । इत्यादि ।

"ने" का प्रयोग ।

१—सकर्मक क्रियाओंके सामान्य, आसन्न, सन्दिग्ध, पूर्ण, आसन्न हेतुहेतुमद् और पूर्ण हेतुहेतुमद् (अन्तरित हेतुहेतुमद्) भूतोंमें कर्तामें "ने" चिन्ह आता है, कर्मका चिन्ह न होने पर क्रिया कर्मके अनुसार होती है तथा जब कर्मका चिन्ह रहता

है तो, क्रिया पुँल्लिङ्ग एकवचन होती है। जैसे,—रामने पुस्तक पढ़ी, पढ़ी है, पढ़ी होगी, पढ़ी थी, पढ़ी हो, पढ़ी होती। उसने घोड़ीको देखा,—है,—होगा,—था,—हो,—होता।

२—अपूर्ण, सामान्य हेतुहेतुमद् और अपूर्ण हेतुहेतुमद् भूतोंमें, अकर्मक क्रियाओंमें तथा बोलना, बकना, भूलना, भुनना, लाना, जनना आदि सकर्मक धातुओंमें, उन सामान्यादि भूतोंके रहने पर भी, कर्ताका "ने" चिन्ह नहीं आता है। इस दशामें क्रिया कर्ताके अनुसार होती है। जैसे,—राम देखता था, राम देखता तो, मैं जाता, राम देखता होता तो, मैं जाता। राम आया, आया है,—होगा—था,—हो,—होता। वह बोला,—है,—होगा,—था,— हो,—होता। घोड़ी बछेड़ा जनी,—है,—होगी,—थी,—हो,—होती इत्यादि।

३—यदि संयुक्त क्रियाओंमें भी, अन्तमें, कोई अकर्मक क्रिया हो वा पाना, करना आदि सकर्मक क्रियाएँ हो, पौनः-पुन्य अर्थ जताने वाले संयुक्त धातु हो और यदि पुकारना धातुमें कर्म न हो तो, कर्तामें "ने" नहीं लगता। जैसे,—वह उसे देख आया,—है,—होगा,—था,—हो,—होता। वह मेरे दस रुपये खा बैठा,—है,—होगा,—था,—हो,—होता। इसी तरह ले भागा इत्यादि। वह पुस्तक पढ़ पाया,—है,—होगा,—था,—हो,—होता। वह रात भर बैठे २ पढ़ा किया। वह सारी बातें सुना किया? आप वहाँ क्या किया किये। कोतवाल साहब पुकारे। (कर्म रहने पर कोतवालने सिपाहीको पुकारा।)

४—संयुक्त क्रियाओंके अन्तमें सकर्मक क्रिया रहने पर भी "ने" का प्रयोग नहीं होता है: यदि वह संयुक्त क्रिया अकर्मक रहे। जैसे,—जब मानसिंह चढ़ आये तो, पठानोंकी सेना चल दी। जब सम्राट् आये तो, सब सरदार तैयार हो लिये

थे। जब वह चलने लगे तो, हम भी हो लिये। इत्यादि। किसी २ के सिद्धान्तमें 'उसने हँस दिया' आदि प्रयोग भी शुद्ध हैं।

५—समझना, सोचनामें विकल्पसे "ने" लगता है। जैसे,—वह यह बात सोचा, समझा। उसने यह बात सोची, समझी।

लिङ्गनिर्णय।

१—हिन्दीमें लिङ्गनिर्णय दो प्रकारसे होता है,—(१) शब्द-के अर्थसे, (२) उसके रूपसे।

२—प्राणिवाचक संज्ञाओंका लिङ्ग बहुधा अर्थके अनुसार और अप्राणिवाचक संज्ञाओंका लिङ्ग बहुधा रूपके अनुसार निश्चित करते हैं। जिन शब्दोंका लिङ्ग इन दोनों रीतियोंसे निश्चित नहीं हो सकता, उनका लिङ्ग व्यवहारके अनुसार मानते हैं।

(अर्थके अनुसार लिङ्गनिर्णय।)

३—जिन प्राणिवाचक संज्ञाओंसे मिथुन (जोड़े) का ज्ञान होता है, उनकी पुरुष-बोधक संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग और स्त्रीबोधक संज्ञाएँ स्त्रीलिङ्ग होती हैं। जैसे,—पुरुष, घोड़ा, मोर आदि पुँल्लिङ्ग हैं और स्त्री, घोड़ी, मोरनी आदि स्त्रीलिङ्ग हैं।

अपवाद,—'सन्तान' और 'सवारी' (यात्री) स्त्रीलिङ्ग हैं।

(शिष्ट लोगोंमें स्त्रीके लिये 'घरके लोग' ऐसा पुँल्लिङ्ग शब्द भी बोलते हैं।)

४—कई एक मनुष्येतर प्राणियोंके नामोंसे दोनोंका बोध होता है और वे व्यवहारके अनुसार पुं० या स्त्री० माने जाते

हैं। जैसे,—पुँ०, पत्ती, उल्लू, कौवा, भेड़िया, चीता, खटमल, कोड़ा, केचुआ, साँप, गोह, गिद्ध आदि। स्त्री०, चील, कोयल, मैना, लावा, गिलहरी, जोंक, तितली, मक्खी, मछली, दीमक आदि।

५—इनके नामोंके साथ पुरुषका बोध करनेके लिये "नर" और स्त्रीके बोधके लिये "मादा" भी लगाते हैं; परन्तु इन उपसर्गोंके कारण शब्दोंके मूल लिङ्गमें अन्तर नहीं पड़ता। जैसे,—बीस हजार मक्खियाँ उन निकम्मी नर-मक्खियोंको खिलाकर शहद वृथा नहीं खोतीं।

६—प्राणियोंके समुदाय-वाचक नाम व्यवहारके अनुसार नित्य पुँ० वा स्त्री० होते हैं। जैसे,—पुँ०—झुण्ड, कुटुम्ब, सङ्घ, दल, मेला इत्यादि। स्त्री०—भीड़, सेना, फौज, सभा, प्रजा, टोली, सरकार, शासक इत्यादि। 'समाज' शब्द स्त्रीलिङ्ग में अधिक आता है; पर कोई कोई लेखक इसे पुँल्लिङ्ग भी लिखते हैं।

७—अप्राणिवाचक शब्दोंका लिङ्गनिर्णय उनके रूपके अनुसार ही प्रायः होता है; परन्तु किसी किसी वैयाकरणने उनके लिङ्गनिर्णयके कुछ खास नियम भी बतलाये हैं। मेरी रायमें वे अव्यापक और अपूर्ण हैं। उनमेंसे कुछ खास नियम यहाँ भी दिये जाते हैं।

पुँल्लिङ्ग।

(क) शरीरके अवयवोंके नाम पुँल्लिङ्ग हैं—बाल, सिर, मस्तक, तालु, ओठ, दाँत, मुँह, कान, गाल, हाथ, पाँव, नख, हैंठ इत्यादि।

अपवाद—आँख, नाक, जीभ, बाँह, खाल, नस, चूतड़, काँख, नस, हड्डी, इन्द्रिय इत्यादि।

(ख) धातुओंके नाम—सोना, रूपा, लोहा, ताँबा, सीसा, काँसा, पीतल, टीन इत्यादि ।

अप०—चाँदी इत्यादि ।

(ग) रत्नोंके नाम—हीरा, मोती, माणिक, मूँगा, पन्ना इत्यादि ।

अप०—मणि, चुन्नी, लालड़ी इत्यादि ।

(घ) पेड़ोंके नाम—पीपल, बड़, सागोन, शीशम, देवदार, तमाल, अशोक इत्यादि ।

अप०—नीम, जामुन, कचनार, ऊख, सेम, अद्रक इत्यादि ।

(ङ) अनाजोंके नाम—जौ, गेहूँ, चावल, बाजरा, मटर, चना, तिल इत्यादि ।

अप०—मक्का, जुआर, मूँग, अरहर इत्यादि ।

(च) द्रव-पदार्थों के नाम—घी, तेल, पानी, दही, शर्बत, सिरका, इत्र, आसव, अवलेह इत्यादि ।

अप०—छाछ, स्याही, खीर, मसी इत्यादि ।

(छ) जल और थलके विभागोंके नाम—देश, नगर, पर्वत, द्वीप, समुद्र, सरोवर, आकाश, पाताल इत्यादि ।

अप०—पृथ्वी, झील, नदी, घाटी इत्यादि ।

(ज) ग्रहोंके नाम—सूर्य्य, चन्द्र, मंगल, राहु, केतु, शनि इत्यादि ।

अप०—पृथ्वी ।

स्त्रीलिङ्ग ।

(क) नदियोंके नाम स्त्रीलिंग होते हैं—गङ्गा, यमुना, नर्मदा, ताप्ती, कृष्णा इत्यादि ।

(ख) तिथियोंके नाम—परिवा, दूज, तीज, चौथ, पञ्चमी इत्यादि ।

(ग) नक्षत्रोंके नाम—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी इत्यादि ।

(घ) वर्णमालाके अक्षर—इ, ई, ऋ, ए, ऐ इत्यादि ।

(ङ) किरानेका नाम—इलायची, लौंग, सुपारी, जावित्री, केशर, दालचीनी इत्यादि ।

अप०—तेजपात, कपूर इत्यादि ।

(च) भोजनोंके नाम—पूड़ी, कचौड़ी, खीर, दाल, रोटी, तरकारी, कढ़ी, खिचड़ी इत्यादि ।

अप०—भात, हलुआ, रायता, मोहनभोग ।

(रूपके अनुसार लिङ्गनिर्णय ।)

हम कह चुके हैं कि, अप्राणिवाचक संज्ञाओंके लिङ्गका निर्णय बहुधा शब्दके रूपके अनुसार ही किया जाता है। हिन्दीमें संस्कृत और यावनी (विदेशी) शब्द भी आते हैं; इसलिये इन भाषाओंके शब्दोंका अलग अलग विचार करनेमें सुभीता है ।

१ हिन्दी शब्द ।

पुँल्लिङ्ग ।

(१) गुणवाचक संज्ञाओंको छोड़ शेष हिन्दीकी आकारान्त संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग होती हैं:—गन्ना, पैसा, पहिया, दरिया, आटा, कपड़ा इत्यादि ।

(२) जिन भाववाचक संज्ञाओंके अन्तमें "ना," "आव", "पन" और "पा" होता है,—आना, गाना, चढ़ाव, बढ़ाव, बड़प्पन, बुढ़ापा, भैयापा इत्यादि ।

(३) कृदन्तकी नकारान्त संज्ञाएँ, जिनका धातु नकारान्त न हो और जिनका उपान्त्य वर्ण आकारान्त हो,—लगान, मिलान, खान, पान, गान, नहान, उठान, ब्यान इत्यादि।

अपवाद—उड़ान इ०।

स्त्रीलिंग।

(१) ईकारान्त संज्ञाएँ,—नदी, चिट्ठी, उदासी इत्यादि।

अप०—पानी, घी, मोती, जी, दही इ०।

(२) गुणवाचक आकारान्त संज्ञाएँ,—फुड़िया, खरिया, डिबिया, टिलिया इत्यादि।

(३) तकारान्त संज्ञाएँ,—रात, बात, लात, छत, पत इ०।

अप०—भात, खेत, सूत, दाँत, गात इ०।

(४) ऊकारान्त संज्ञाएँ,—बालू, लू, तराजू, दारू, ब्यालू, आबरू इ०। अप०, आलू, रतालू, चाकू, लड्डू, डमरू, जनेऊ इ०।

(५) अनुस्वारान्त संज्ञाएँ,—सरसों, भौं, दौं, चूं, लौं इ०। अप०, काढों, गेहूँ इत्यादि।

(६) सकारान्त संज्ञाएँ,—प्यास, मिठास, रास (लगाम), बाँस, घास, साँस, रोआस इत्यादि। अप०, निकास, रास (नृत्य), विकास इत्यादि।

(७) कृदन्तकी नकारान्त संज्ञाएँ,—जिनका उपान्त्य वर्ण अकारान्त अथवा जिनका धातु नकारान्त हो,—सूजन, जलन, गढ़न, रहन, सहन, उलझन, छान, जान, पहचान इ०। अप०, चलन चाल-चलन उभय-लिंग है।

(८) कृदन्तकी अकारान्त संज्ञाएँ,—लूट, मार, समझ, दौड़, सम्हाल, रगड़, चमक, छाप, पुकार, गन्ध आदि। अप०, खेल, मेल, बिगाड़, बोल, उतार इत्यादि।

(९) जिन संज्ञाओंके अन्तमें ख होता है,—ऊख, दाख, मीख, भीख, राख, आँख, काँख, कोख, परख, साख, चीख, देख, रेख आदि। अप०, पाख, रुख।

(१०) जिन भाववाचक संज्ञाओंके अन्तमें आई, हट, वट होते हैं:—भलाई, चिल्लाहट, बनावट, घबराहट इत्यादि।

२ संस्कृत शब्द।

पुँल्लिङ्ग

(१) त्रान्त संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग होती हैं,—पात्र, चित्र इ०।

(२) नान्त संज्ञाएँ,—पालन, पोषण, दमन इ०।

अप०—पवन उभयलिङ्ग है।

(३) जान्त संज्ञाएँ,—जलज, उरोज इ०।

(४) जिनके अन्तमें त्व, त्य, व, र्य होवे,—सतीत्व, कृत्य, लाघव, माधुर्य्य इ०।

(५) जिन संज्ञाओंके अन्तमें आर, आय या आस हो:—विकार, विस्तार, अध्याय, उल्लास, ह्रास इ०।

अप०—सहाय उभयलिङ्ग और आय स्त्रीलिङ्ग है।

(६) अ प्रत्ययान्त संज्ञाएँ:—क्रोध, मोह इ०।

अप०—शपथ, कुशल, सामर्थ्य, पुस्तक, जय, रामायण, ग्रन्थ स्त्रीलिङ्ग हैं और विनय उभयलिङ्ग है।

(७) जिनके अन्तमें ख होता है—मुख, नख इत्यादि।

स्त्रीलिङ्ग।

(१) आकारान्त संज्ञाएँ:—दया, शोभा, प्रार्थना इ०।

(२) उकारान्त संज्ञाएँ:—वायु, रज्जु, मृत्यु, आयु, जानु, वस्तु, ऋतु, बाहु, रेणु।

अप०—साधु, शम्भु, मधु, अश्रु, तालु, तरु, सेतु इ०।

(३) ति और ता प्रत्ययान्त,—बुद्धि, कृति, नम्रता, जड़ता इ०। अप०—देवता।

(४) इकारान्त संज्ञाएँ:—विधि, निधि, परिधि, राशि, अग्नि (आग), छवि, रुचि, केलि आदि।

अप०—वारि, गिरि, जलधि, कृमि, बलि, पाणि इ०।

(५) इमा प्रत्ययान्त,—महिमा, गरिमा, लघिमा आदि।

३ यावनी शब्द।

पुँल्लिङ्ग।

(१) जिन शब्दोंके अन्तमें 'आब' होता है वे पुँल्लिङ्ग होते हैं:—गुलाब, हिसाब, असबाब, खिजाब, जवाब इ०।

अप०—शराब, मिहराब, किताब, ताब, किमखाब इ०।

(२) जिनके अन्तमें आर या आन हो,—बाजार, इकरार, इजहार, इश्तिहार, इन्कार, एहसान, मकान इ०।

अप०—दूकान, जान, सरकार (शासक-समूह), तकरार, दीवार इ०।

(३) जिनके अन्तमें ह हो,—(हिन्दीमें यह 'ह' बहुधा 'आ' होकर अन्त्य स्वरमें मिल जाता है।) पर्दा, गुस्सा, किस्सा, रास्ता, तम्बूरा, चश्मा, तमगा (हि० तगमा) इ०।

अप०—दफा इत्यादि।

स्त्रीलिङ्ग।

(१) ईकारान्त भाव-वाचक संज्ञाएँ,—बीमारी, गरमी, गरीबी इ०।

(२) शकारान्त संज्ञाएँ,—नालिश, कोशिश, लाश, तलाश, मालिश, ख्वाहिश इ०। अप०, ताश, होश, बालिश इ०।

(३) तकारान्त संज्ञाएँ,—दौलत, कसरत, हजामत, अदालत, कीमत, मुलाकात, हालत, जमानत, लियाकत, दावत इ०।

अप०—दस्तख़त, दरख़्त, औसत, ख़त, सबूत, तख़्त आदि।

(४) हकारान्त संज्ञाएँ,—राह, तरह, आह, सलाह सुलह। अप०—माह, गुनाह इ०।

(५) आकारान्त संज्ञाएँ,—हवा, दवा, सज़ा, दुनिया, बला (हि० बलाय) इ०।

अप०—'मज़ा' उभयलिङ्ग और 'दगा' पुँल्लिङ्ग हैं।

(६) "तफ़इल" के वज़नकी संज्ञाएँ,—तस्वीर, तहसील जागीर, तामील, तफ़्सील इ०। अप०, तावीज़।

(७) हिन्दीमें लगभग तीन-चौथाई शब्द संस्कृतके हैं, जो तत्सम और तद्भव रूपमें आते हैं। संस्कृतके पुँल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्गके शब्द हिन्दीमें बहुधा पुँल्लिङ्ग होते हैं और स्त्रीलिङ्ग शब्द प्रायः स्त्रीलिङ्ग ही होते हैं; तथापि कई एक तत्सम और तद्भव शब्दोंका मूल लिङ्ग हिन्दीमें बदल गया है:—

तत्सम शब्द।

शब्द,—	सं० पुं०	हिन्दी स्त्री०
अग्नि	"	"
जय	"	"
आत्मा	"	"
महिमा	"	"
देह	"	"
व्यक्ति	स्त्री०	पुं०
तारा	"	"
देवता	"	"
वस्तु	नपुं०	स्त्री०
पुस्तक	"	"

तद्भव शब्द।

तत्सम	संस्कृत पुँ०	तद्भव	हिन्दी स्त्री०
शपथ	,,	सौंह	,,
विन्दु	,,	बूँद	,,
तन्तु	,,	ताँत	,,
अक्षि	न०	आँख	,,

(तत्सम शब्दोंका प्रयोग शास्त्री, पण्डित आदि विद्वान बहुधा संस्कृतके लिङ्गानुसार ही करते हैं।)

(८) अरबी, फारसी आदि यावनी भाषाओंके शब्दोंमें भी इस तरह हिन्दीमें लिङ्गान्तरके कुछ उदाहरण पाये जाते हैं। जैसे,—"मुहावरत" अरबी स्त्रीलिङ्ग और "मुहाविरा" हिन्दी पुँल्लिङ्ग हो गया है। (प्लाइसकृत हिन्दुस्थानी ग्रामर।)

(९) अंग्रेजी शब्दोंके सम्बन्धमें लिङ्गनिर्णयके लिये प्रायः अर्थ और रूप, दोनोंका विचार किया जाता है। कुछ शब्दों-को उसी अर्थके हिन्दी शब्दोंका लिङ्ग प्राप्त हुआ है:—

अंग्रेजी	हिन्दी	पुँ०	अं०	हिन्दी	स्त्री०
कोट	अँगरखा	,,	कम्पनी	मण्डली	,,
लेक्चर	व्याख्यान	,,	फीस	दक्षिणा	,,
वारण्ट	चालान	,,	कमिटी	सभा	,,
लैम्प	दिया	,,	चेन	साँकल, साँकड़ी	,,
बूट	जूता	,,	स्टिक	छड़ी	,,

(१०) कई एक शब्द आकारान्त होनेके कारण पुँल्लिङ्ग और ईकारान्त होनेके कारण स्त्रीलिङ्ग हुए हैं;—

पुँ०—सोडा, डेल्टा इ०। स्त्री०—चिमनी, गिनी, म्युनि-सिपलिटी इ०।

(११) लालटेन, कल, मशीन, तोप, बन्दूक, मेज, टेबुल, स्लेट, अपील, मोटर, कौंसिल, कांग्रेस, रिपोर्ट आदि स्त्री-लिङ्ग हैं ।

(१२) अधिकांश सामासिक शब्दोंका लिङ्ग अन्त्य शब्दके लिङ्गके अनुसार होता है:—रसोईघर (पुँ०), धर्मशाला (स्त्री०), माँ-बाप (पुँ०), आब-हवा (स्त्री), काँजी-हौस (पुँ०) इ० ।

(१३) कई एक हिन्दी व्याकरणोंमें यह ऊपरका नियम व्यापक माना गया है; परन्तु सभी स्थानोंमें यह नियम नहीं लगता । "मन्दमति," यह शब्द केवल कर्मधारयमें स्त्रीलिङ्ग है औरोंमें विशेष्यके अनुसार होता है । जैसे:—मन्दमति बालक ।

(१४) सभा, पत्र, पुस्तक और स्थानके व्यक्तिवाचक नामोंका लिङ्ग प्रायः शब्दके रूपके अनुसार होता है । जैसे:— "महासभा" (स्त्री), "महामण्डल" (पुँ०), "मर्य्यादा" (स्त्री), "प्रभा" (स्त्री), "प्रताप" (पुँ०), "भारतमित्र" (पुँ०), "रघुवंश" (पुँ०), महाभारत (पुँ०), आगरा (पुँ०), मथुरा (स्त्री), प्रयाग (पु०), दिल्ली (स्त्री०) ।

(१५) यूनानी, इबरानी, पुर्त्तगाली और तुरकी आदि भाषाओंके हिन्दीमें आये हुए जो शब्द हैं, उनका लिङ्ग-निर्णय व्यवहारके अनुसार होता है । अब तो, कितने ही शब्द हिन्दीके निजी भी हो गये हैं ।

शब्दरूप ।

(१) कर्त्ता कारकमें ने, कर्ममें को, करण में से, सम्प्रदानमें को, के लिये, अपादानमें से, सम्बन्धमें का, के, की और अधि-करणमें पर, में विभक्तियाँ लगती हैं ।

(२) आकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दोंको छोड़कर, विभक्ति न रहने पर, शेष सब शब्दोंके रूपोंमें कुछ भी विकार नहीं होता और एकवचनमें विभक्ति रहने पर भी नहीं होता है। जैसे,—एक० मनुष्य, मनुष्यने, मनुष्यको, बहुत मनुष्य। विद्यार्थी, विद्यार्थीने, विद्यार्थीको, बहुत विद्यार्थी इत्यादि।

(३) आकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दोंके निर्विभक्तिक बहुवचन और सविभक्तिक एकवचनमें "आ" को एकार कर देते हैं। जैसे,—बहुत लड़के, एक लड़केने, लड़केको इ०।

(४) अकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके अन्तिम "अ" को "एं" करनेसे कर्त्तामें निर्विभक्तिक बहुवचन बनता है।

जैसे,—ए० बात, ब० बातें। ए० ग्राम, ब० ग्रामें इ०।

(५) आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके आगे 'एँ' जोड़नेसे निर्विभक्तिक कर्त्तामें बहुवचन बनता है। जैसे,—ए० लता सभा, ब० लताएँ, सभाएँ इत्यादि।

(६) इ और ई अन्तवाले स्त्रीलिङ्ग शब्दोंमें 'यां' जोड़नेसे और ई को इ कर देनेसे निर्विभक्तिक कर्त्तामें बहुवचन बनता है। जैसे,—एक० नदी, रुचि। बहु० नदियाँ, रुचियाँ इ०।

(७) उ, ऊ और औ अन्तवाले स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके निर्विभक्तिक एकवचन और बहुवचन समान ही होते हैं। जैसे,—एक० बहू, सरसों। बहु० बहू, सरसों।

(८) सविभक्तिक शब्दोंके बहुवचनमें निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं:—

(क) अकारान्त शब्दोंमें दोनों लिङ्गोंके 'अ' को 'ओं' कर देनेसे:–एक० मनुष्यको, बातको। बहु० मनुष्योंको, बातोंको इ०।

(ख) आकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दोंके 'आ' को 'ओं' और

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके आगे 'ओं' करनेसे,—एक० लड़केको, मालाको । बहु० लड़कोंको, मालाओंको इत्यादि ।

(ग) इ और ई अन्तमें रखनेवाले दोनों लिङ्गके शब्दोंमें 'यों' जोड़नेसे और ई को ह्रस्व करनेसे,—एक० पतिको मतिको, मालीको, नदीको । बहु० मालियोंको, पतियोंको इ० ।

(घ) उ, ऊ, ए, ओ और औ अन्तमें रखनेवाले दोनों लिङ्गके शब्दोंमें "ओं" जोड़नेसे और ऊ को उ करनेसे,—एक० साधुको, बहूको, पाण्डेको, कोदोको सरसोंको । बहु० साधुओंको, बहुओंको, पाण्डेओंको, कोदोओंको, सरसोंओंको ।

(ङ) सम्बोधनमें शब्दोंके बहुवचनमें पूर्वोक्त नियमानुसार अन्त्य स्वरको 'ओ' हो जाता है तथा 'ओ' और 'यो' को जोड़ देते हैं,—हे नरो, हे लड़को, हे माताओ, हे मालियो, हे नदियो, हे साधुओ, हे धेनुओ, हे डाकुओ, हे बहुओ इत्यादि ।

क्रियारूप ।

जिसके अन्तमें ना हो और जिसका अर्थ व्यापार हो, वही क्रियाका सामान्य रूप है । क्रिया सकर्मक-अकर्मक भेदसे दो प्रकारकी होती है । फिर, वही कालकृत भेदसे सामान्यतः (१) वर्तमान, (२) भूत, (३) भविष्यत्, तीन प्रकारकी होती है ।

वर्तमान,—जिसमें क्रियाका व्यापार शुरू हो गया हो; पर समाप्त नहीं हुआ हो । जैसे,—वह खाता है, खा रहा है इत्यादि ।

इसके चार भेद हैं:—सामान्य, तात्कालिक, सन्दिग्ध और हेतुहेतुमद् ।

उदाहरण,—राम खाता है, खा रहा है, खाता होगा, यदि वह दूध पीता हो तो, उसे दो।

भूत,—इसमें क्रियाका व्यापार समाप्त हो गया रहता है। इसके नौ भेद हैं:—सामान्य, आसन्न, पूर्ण, सन्दिग्ध, अपूर्ण, अपूर्णहेतुहेतुमद्, आसन्न हेतुहेतुमद्, अन्तरित हेतुहेतुमद् और सामान्य हेतुहेतुमद्।

उदाहरण,—राम आया, आया है, आया था, आया होगा, आता था, राम आता तो, मैं जाता, राम आया हो तो, उसे बुलाऊँ, राम आया होता तो, मैं गया होता, यदि राम आता होता तो, मैं देखता।

भविष्यत्,—इससे क्रियाका व्यापार आगे होनेवाला प्रतीत होता है। इसके सामान्य, हेतुहेतुमद् और सम्भाव्य भेदसे तीन प्रकार हैं।

उदाहरण,—राम आवेगा, राम आवे तो, मैं जाऊँ, कदाचित् राम आवे।

संस्कृतके जो विधि, आज्ञा आदि लकार हैं, वे इन्हींमें अन्तर्भूत हो जाते हैं।

——:*:——

संज्ञा।

व्युत्पत्तिके विचारसे संज्ञा चार प्रकारकी होती है:—

(१) रूढ़ि, (२) यौगिक, (३) योगरूढ़ि (४) और यौगिकरूढ़ि।

रूढि,—जिसके खण्डका कुछ अर्थ ही न हो, या हो भी तो, दूसरा ही हो:—बालु; इसके खण्ड बा+लु का कुछ अर्थ नहीं है। 'मण्डप' का खण्ड मण्ड+प=माँड पीनेवाला है;

परन्तु समुदायका अर्थ यज्ञशाला है। यहाँ अर्थ ही बदल गया है।

यौगिक,—जिसके खण्डका अर्थ मिलाकर समुदायका बोध हो :—यज्ञशाला = यज्ञका घर।

योगरूढ़ि,—जिसमें यौगिक संज्ञाके समान खण्डार्थको लेते हुए किसी खास अर्थको कहा जायः—पङ्क + ज = कीचमें पैदा होनेवाला: परन्तु कमल ही, दूसरी चीज नहीं।

यौगिकरूढ़ि,—जिसके खण्डार्थसे भी एक वस्तुका बोध हो और रूढ़िसे भी एक दूसरेका ही बोध हो। उद्भिज् + ज = ऊपर भेद कर निकलनेवाला वृक्ष, लता प्रभृति। यहाँ रूढ़िसे एक खास "यक्ष" अर्थको भी कहता है।

अर्थ-भेदमें, अंग्रेजीके समान, संज्ञाके पाँच भेद भी होते हैं;—व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक, समूहवाचक और द्रव्यवाचक। इनका जो अवयवार्थ है, वही इनकी परिभाषा है। इनका उदाहरण क्रमशः राम, मनुष्य, चौड़ाई, सेना, घी इत्यादि है।

—— :o: ——

सर्वनाम।

संज्ञाके बदलेमें जिसका प्रयोग हो, उसे सर्वनाम कहते हैं। जैसे,—मैं, तू, वह, कौन इत्यादि।

सर्वनाम शब्दोंका रूप।

विभक्तियुक्त होने पर या विभक्तियुक्त विशेष्यके विशेषण होने पर निम्न रूप हो जाते हैं :—

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
वह—उस।	वे—उन।	जो—जिस।	जिन
यह—इस।	ये—इन।	कौन—किस।	किन
मैं—मुझ।	हम—हम।	कोई—किसी।	किन्हीं
तू—तुझ।	तुम—तुम।		

ने से युक्त होने पर मैं और तू का रूप नहीं बदलता।

समास।

समास,—दो या उनसे भी अधिक शब्द जब अपनी विभक्तियाँ छोड़कर आपसमें मिलते हैं तो, समास कहते हैं। जैसे,—राजपुरुष = राजाका पुरुष। भूपति = पृथ्वीका स्वामी।

इसके सात भेद हैं:—(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) नञ्, (४) कर्मधारय, (५) द्विगु, (६) द्वन्द्व (७) और बहुव्रीहि।

अव्ययीभाव,—इसमें पहला शब्द अव्यय होगा: उसीका अर्थ मुख्य रहेगा। समस्त शब्द संस्कृतमें नपुंसकलिङ्ग हो जाते हैं। जैसे,—यथाशक्ति = शक्तिके अनुसार।

तत्पुरुष,—इसमें पहले पदमें कर्ता कारक को छोड़कर सब कारक रहते हैं और दूसरे शब्दमें प्रथम ही कारक रहता है और वही प्रधान रहता है। जैसे,—ग्रामगामी = गाँवको जाने-वाला, रामकृत = रामका बनाया।

नञ्,—"न" और दूसरे शब्दोंके साथ समासको नञ् कहते हैं। जैसे—अब्राह्मण = ब्राह्मण नहीं।

कर्मधारय,—यह विशेष्य विशेषण और उपमेय उपमानके साथ होता है,—नीलकमल = काला कमल।

द्विगु,—इसमें पहला शब्द संख्यावाचक होता है और समस्त शब्दोंसे समुदायका ज्ञान होता है। जैसे,—नवरत्न = नवरत्नोंका समुदाय। पञ्चपात्र, त्रिलोकी इत्यादि।

द्वन्द्व,—जिसमें 'और' शब्द लोप हो और दोनों प्रधान हों। जैसे,—अन्न-जल, राम-कृष्ण इत्यादि।

बहुव्रीहि,—इसमें जिन शब्दोंके साथ समास होता है, उनमें किसीका अर्थ प्रधान नहीं होता; किन्तु दोनोंको मिलाकर एक दूसरा ही अर्थ होता है। जैसे,—चन्द्रशेखर = न चन्द्र न शेखर; किन्तु एक दूसरा ही "शिव" अर्थ है। यहाँ चन्द्रमा है शिर पर जिसके, ऐसा विग्रह(१) समझना चाहिये। यों ही पीताम्बर, वज्रायुध इत्यादि।

——:*:——

कृदन्त ।

धातुसे प्रत्यय करने पर सामान्यतः पाँच प्रकारके, कृदन्तके, शब्द बनते हैं:—कर्तृवाचक, भाववाचक, करणवाचक, विशेषणवाचक और अव्ययवाचक।

१—कर्तृवाचक,—क्रिया और धातुसे वाला, हारा, हार, वाहा, अक, आक, आ, इया, ऐया, वैया, एरा और आरी या आड़ी प्रत्यय करने पर कर्तृवाचक संज्ञा होती है। जैसे,—पानेवाला, पानेहारा, सिर्जनहार, चरवाहा, विचारक, तैराक, भूँजा, खोजिया, परखैया, रिझवैया, लुटेरा, पुजारी, खिलाड़ी।

(२) भाववाचक,—यदि क्रियाके सामान्य रूप को ही बोलते हों या उसके अन्त्य आ को अ करके बोलें या धातुके

(१) समस्त पदोंको अलग २ करनेका नाम विग्रह है।

शुद्ध रूप को ही बोलते हों तो, यह होता है। जैसे,—जाना, आना इत्यादि। लेन, देन इत्यादि। खोज, मार इत्यादि।

(क) धातुसे अक, अन, आन, आप, आव, आवा, आ, आई, वट, हट, त, ती, ई इत्यादि प्रत्यय लगाने से भाववाचक संज्ञाएँ होती हैं,—बैठक, चलन, चलान, मिलाप, लगाव, भुलावा, गुजारा, छापा, लड़ाई, बनावट, सजावट, चिल्लाहट, बचत, बढ़ती, हँसी, बोली।

(ख) सब संस्कृतके भाववाची प्रत्ययोंके रहने पर भी,—भक्ति, सत्ता इत्यादि।

(३) करणवाचक,—इसमें कहीं कहीं क्रियाका सामान्य रूप कहते, कहीं ना को नी कर देते और कहीं धातु में आ जोड़ देते हैं। जैसे,—ढकना, कतरनी, चलनी, खुरचनी आदि। गाड़ा, घेरा आदि।

(४) विशेषणवाचक,—इसे सामान्यभूतकी क्रिया और हेतुहेतुमद्भूतकी क्रिया को ही समझना चाहिये। जैसे,—पढ़ा, आया, बहता, दौड़ता। इसका प्रयोग यों होता है,—पढ़ा पाठ याद नहीं है, बहता पानी अच्छा है।

(क) आक, आका, आऊ, ऊ और इयल प्रत्यय लगाने पर भी विशेषणवाचक संज्ञाएँ होती हैं:—उड़ाक, लड़ाका, कमाऊ, बेचू और अड़ियल।

(५) अव्ययवाचक,—इसमें विशेषणवाचक कृदन्त शब्द-को दुहरा देते हैं:—बैठे २, सोये २ घबरा गया। चलते २ थक गया आदि।

तद्धित।

शब्दोंके साथ प्रत्यय जोड़नेसे तद्धित शब्द बनते हैं। हिन्दीमें अगणित तद्धितप्रत्यय हैं। वस्तुतः हिन्दीकी जान तद्धितप्रत्यय ही हैं।

तद्धितान्त शब्द ६ प्रकारके होते हैं:—कर्तृवाचक, गुणवाचक, भाववाचक, अल्पार्थक, अव्ययवाचक, पूरणार्थक, सादृश्यार्थक, आदरार्थक, निश्चयार्थक।

कर्तृवाचक।

ई,—विदेशी, बिहारी, बङ्गाली, तेली। इया,—अढ़तिया, डाकिया, बखेड़िया। वाला,—दहीवाला, चूड़ीवाला, लाठीवाला। हारा,—पनिहारा, लकड़िहारा, चूड़िहारा। गार,—खिदमतगार, यादगार, परहेजगार। ची,—खजानची, तबलची, बावरची। वाहा,—हरवाहा, चरवाहा, कुदरवाहा। आर,—सितार, किनार, सुनार। एरा,—कसेरा, सँपेरा, लुटेरा। री,—मदारी, पुजारी, कोठारी। वार,—पतवार, तलवार, बेलवार। हार,—गढ़नहार। उआ,—मछुआ। एड़ी,—भँगेड़ी, गँजेड़ी। ऐत,—कमनैत, भड़ैत, ढलैत।

गुणवाचक।

वा,—बुढ़वा, कुड़वा, पुरवा। ऊ,—खड़ाऊ, टिकाऊ, अगाऊ। हरा,—एकहरा, दोहरा, तेहरा। ऐला,—खपड़ैला, बिगड़ैला, सुरैला। इया,—लटपटिया, खटपटिया, चटपटिया। नाक,—खतरनाक, खौफनाक, दर्दनाक। मन्द,—अकलमन्द, दौलतमन्द, फायदेमन्द। वर,—ताकतवर, जोरावर, दिलावर। वार,—पैदावार, उम्मीदवार, फूलवार। सार,—चलनसार, मिलनसार। मान्,—श्रीमान्, बुद्धिमान्, मतिमान्। वान्,—

धनवान्, गुणवान्, ज्ञानवान्। वी (विन्),—यशस्वी, मायावी, मेधावी। ई,—धनी, मानी, गुणी। आलु,—दयालु, कृपालु, श्रद्धालु। इत,—दुःखित, अङ्कुरित, दीक्षित। तर, तम,—गुरुतर, सूक्ष्मतम। इष्ठ,—ज्येष्ठ, कनिष्ठ, श्रेष्ठ। ईय,—भारतीय, स्वर्गीय, राजकीय। इक,—धार्म्मिक, सामाजिक, राजनीतिक।

भाववाचक।

वा—भुलावा, बुलावा, बहलावा आदि। आई,—चौड़ाई, बड़ाई, छोटाई। हट,—सरबराहट, चिकनाहट, कड़ुआहट। पन,—अल्हड़पन, बचपन। त,—मिन्नत, दिक्कत, कसरत। पा,—बुढ़ापा, भैयापा। आरा,—निपटारा, बटवारा, छुटकारा। आस,—मिठास, दिलास, भुखास। गी,—जिन्दगी, रञ्जगी, ताजगी। य,—धैर्य्य, शैत्य, माधुर्य्य। ता,—पटुता, प्रभुता, गुरुता। इमा (इमन्),—महिमा, लघिमा, गरिमा। त्व,—प्रभुत्व, गुरुत्व, महत्त्व।

अल्पार्थक।

वा, या, आ,—बछुवा, लोटिया, बटुआ। टी,—चुनौटी, लँगोटी। री,—कोठरी, छतरी, ठटरी। "आ" को "ई" करनेसे,—रस्सी, गोली, टोकरी।

अव्ययवाचक।

तना,—जितना, तितना, उतना। तक,—दूरतक, देरतक, शामतक। ओं,—कोसों, घण्टों, ज्यों, त्यों। ब,—अब, कब, तब। भर,—दिनभर, रातभर, सालभर। सों,—परसों, नरसों, तरसों। था,—सर्वथा, यथा, तथा। त्र,—सर्वत्र, यत्र, तत्र। दा,—सर्वदा, सदा, कदा। तः,—प्रथमतः, सर्वतः, उभयतः। शः,—बहुशः, शतशः, क्रमशः। धा,—बहुधा, द्विधा, त्रिधा।

पूरणार्थक।

वाँ,—पाँचवाँ, नवाँ, दसवाँ आदि।

सादृश्यार्थक।

सा,—आगसा, मरासा, कैसा आदि।

आदरार्थक।

जी,—गुरुजी, बाबूजी, राजाजी।

निश्चयार्थक।

ही,—वही, यही आदि।

—— :*: ——

वाक्य-विचार।

१—यदि एक वाक्यमें एकसे अधिक एकवचन कर्त्ता हों और उनके बीचमें 'या' 'न' आदि कोई शब्द न आया हो तो, क्रिया बहुवचन होती है। जैसे,—राम, श्याम और विहारी आते हैं। राम या श्याम या विहारी नहीं आता है।

२—यदि असमानलिंग और वचनके अनेक कर्त्ता हों तो, क्रिया अंतिम लिंग और वचनके अनुसार होगी। जैसे,—लड़का और लड़कियाँ आयीं। औरत और मर्द झगड़ते हैं। इत्यादि।

३—यदि असमानलिंगके अनेक एकवचन कर्त्ता हों तो, क्रिया पुँल्लिंग और बहुवचनान्त होगी। जैसे,—एक ही झोपड़ेमें बुढ़वा-बुढ़िया रहते थे। राजा-रानी आये। दिन-रात गुज़र गये।

४—यदि "हर एक" या "प्रत्येक" शब्दके साथ संज्ञा हो तो, क्रिया एकवचनान्त ही होती है। जैसे,—प्रत्येक घोड़ा मारा गया।

५—यदि अनेक उद्देश्यों (कर्त्ताओं) का विधेय (क्रिया या क्रिया-समन्वित शब्द) एक हो तो, विधेयमें अन्तिम उद्देश्यका लिंग होता है। जैसे,—उसके कपड़े और पुस्तकें बड़ी अच्छी हैं। पर यदि विधेय संज्ञा हो तो, उसीके अनुसार क्रिया होगी। जैसे,—सोना, चाँदी आदि धातु कहलाता है।

६—यदि स्त्रीलिंग और पुंलिंग शब्द "और" शब्दसे जुटे हों तो, निकटके सम्बन्धीके अनुसार सम्बन्धकारकका चिन्ह आता है। जैसे,—आपके लड़के और लड़कियाँ चिरञ्जीवी हों। और जगह बहुवचनान्त सम्बन्धका चिन्ह आता है। जैसे,—उनके राजा-रानी आये।

७—विशेषणोंके लिंग-वचन विशेष्यके अनुसार होते हैं; पर यदि कई असमान विशेष्योंका एक ही विशेषण हो तो, समीपवर्ती विशेष्यके ही लिंग-वचन होंगे। जैसे,—बड़े छाते और पुस्तकें। बड़ी पुस्तकें और छाते।

पत्र-लेखन।

१—पत्र लिखते समय शिष्टाचारका ही प्राधान्य रहता है। शिष्टाचार-सूचक शब्दोंको "प्रशस्ति" कहते हैं। इस प्रशस्तिमें पुरानी प्रथाके अनुसार बड़ोंको "सिद्धि श्री" और छोटोंको "स्वस्ति श्री" लिखनेके बाद विद्यावृद्धको "पूज्यपाद", "प्रातः-स्मरणीय" आदि, वयोवृद्धको "श्रद्धास्पद", "मान्यवर", "महोदय" आदि, धर्मवृद्धको "धर्मधुरीण", "धर्माचार्य्य" आदि, मित्रको "प्रियवर", "मित्रवर्य्य", "बन्धुवर", "सुहृत्तम", "प्रियमित्र" आदि, छोटेको "चिरञ्जीवी", "प्रियवत्स" आदि, स्त्रीको "प्रिये", "प्राणवल्लभे" आदि, पतिको "आर्य्यपुत्र",

"नाथ", "प्राणनाथ" आदि लिखकर बड़ोंको "प्रणाम", छोटों को "आशीर्वाद" और बराबरको "नमस्कार" आदि लिखा जाता है। फिर पत्र प्रारम्भ किया जाता है।

२—नामके पहले "श्री" शब्द अवश्य लिखना चाहिये। उसका नियम यह है,—

"श्री लिखिये षट गुरुन को, पाच स्वामि, रिपु चारि।
तीन मित्र, दो भृत्य को एक शिष्य, सुत, नारि॥

३—प्रशस्ति-विधिके अनुसार लिखनेवालेका नाम तथा स्थान प्रशस्तिमें ही आ जाना चाहिये। अन्तमें "इति", "इति-शम", "किमधिकम", "इत्यलम", "इतिशुभम", "ॐ शान्तिः," "कृपा बनाये रखियेगा इतिशम" इत्यादि लिखकर पत्र समाप्त किया जाता है। बाद मिति, संवत् आदि लिखा जाता है।

उदाहरण।

(*आचार्यके पास*)

सिद्धि श्री पूज्यपाद श्री ६ आचार्य्यजी महाराजको लिखी काशीजीसे श्रीगोवर्द्धनप्रसादका चरण छूकर प्रणाम पहुँचे। आगे यहाँ सब प्रकार कुशल है। × × आज्ञानुसार मैं अवश्य आऊँगा। कृपा बनी रहे। इति।

मिति श्रावण सुदी १३, बुध, सं० १९७७।

(*शिष्यके पास*)

स्वस्ति श्री चिरजीवी श्रीयमुनाप्रसादको लिखी प्रयागजी-से श्रीरामप्रसादका आशीर्वाद पहुँचे। आगे यहाँ कुशल है। × × × × अपना शुभ समाचार भेजना। इतिशम्। मिति भाद्रपद सुदी २, मंगल, सं० १९७७।

इस प्रथासे भिन्न एक और पुरानी प्रथा प्रचलित है। इसके नियम भी आवश्यक समझ कर लिखे जाते हैं।

१—पत्र लिखते समय लेखक पत्रकी दाहिनी तरफ ऊपर अपना पता और तिथि लिखे। बाद पहली पंक्तिमें बाईं ओर शिष्टाचारानुमोदित शब्दोंको लिखकर दूसरी पंक्तिसे आधी पंक्ति छोड़कर पत्र लिखना प्रारम्भ करे। अन्तमें छोटा लेखक "आपका आज्ञाकारी", "कृपाभिलाषी", "आपका", "भवदीय", "दास", "चरण-सेवक" आदि और बड़ा लेखक "तुम्हारा हितैषी", "शुभेच्छु" आदि, समलेखक "आपका प्रिय मित्र", "अनुगृहीत" आदि लिखकर नीचे दूसरी लाइनमें दाहिनी तरफ श्रीसहित अपना नाम लिखे।

२—हमारे यहाँ यह प्रथा है कि, अपने नाममें लोग "श्री" नहीं लगाते; पर यह ठीक नहीं है। जीवित मनुष्यके नामके आदिमें श्री अवश्य लिखनी चाहिये। बङ्गालमें तो, यह रूढ़ि है कि, यदि नामके आदिमें श्री न रहे तो, उसे लोग जीवित नहीं समझते हैं।

उदाहरण।

(*आचार्य्यके पास*)

पराशरब्रह्मचर्याश्रम, सीताकुण्ड, बलिया।

१२–४–७७

पूज्यपाद श्रीआचार्य्यजीके चरणोंमें साष्टांग प्रणाम।

आपको विदित हो कि, मैं यहाँ संस्कृत पढ़ रहा हूँ। आपका पत्र नहीं आता है; अतः चित्त चिन्तित रहता है। × × × यह निश्चय है कि, यह सब आपकी ही दया है।

आपका आज्ञाकारी,—

श्रीधर्मदेव।

(शिष्यके पास)

दर्शनविद्यालय काशी

१५-४-७७

प्रियवत्स !

मैंने जबसे तुम्हारी खबर सुनी है, तभीसे चित्त चञ्चल हो रहा है। × × मैं बहुत शीघ्र आऊँगा। × × स्वास्थ्य पर ध्यान रखना। "तुलसीदासका भारतके लिये आदेश" छप रहा है। एक प्रति लेता आऊँगा।

तुम्हारा हितैषी,
श्रीविक्रमादित्य त्रिपाठी।

इन दोनों प्रथाओंके सिवा, अंग्रेजी ढंग पर, एक तीसरी प्रथा भी है, जो कि, आजकल खूब ही प्रचलित है। इसके अनुसार पत्रको खूब संक्षेपमें लिखना ही ठीक है। अंग्रेजी तारीख़ ही इसमें काममें लायी जाती है। यह हमारी दूसरी प्रथासे मिलती है; इसलिये इसका लिखना आवश्यक नहीं।

२—प्रार्थना-पत्र पर ऊपर, दाहिनी तरफ, अपना पता लिखने की कोई आवश्यकता नहीं। केवल कुछ हाशिया (Margin) छोड़कर श्रीयुक्त या श्रीमान प्रधानाध्यापक महोदयवर इत्यादि शब्द लिखना चाहिये। दूसरी लाइनमें कुछ दाहिनी तरफ हटकर पाठशालाका नाम, उसके नीचे कुछ हटकर स्थान लिखकर, फिर दूसरी लाइनमें ज्यादा बाईं ओर हटकर सम्बोधनान्त शब्द रहे। यह एक दम ऊपर लिखी हुई लाइनसे भी बाईं ओर हो; क्योंकि, इसीके अनुकूल सारी लाइनें लिखनी होंगी। यह ठीक हाशिया परसे शुरू होना चाहिये। फिर

नीचे दूसरी लाइनमें दाहिनी तरफ कुछ हटकर वाक्य प्रारम्भ करे। अन्तमें शिष्टाचारानुसार दाहिनी तरफ दूसरी लाइनमें अपना नाम और बाईं तरफ Brace (वक्रांकुश) लिखकर पता और तिथि लिखनी चाहिये।

उदाहरण।

श्रीयुक्त प्रधानाध्यापक महोदय,
हरिश्चन्द्र हाई स्कूल,
बनारस।

श्रीपूज्यपाद!

आज मैं आवश्यकीय गृहकार्य-वश पाठशाला नहीं आ सकता। अतः अतीव नम्र निवेदन है कि, मेरी आजकी अनुपस्थिति श्रीमान् क्षमा करें।

दर्शनविद्यालय,
काशी।
तिथि १५-४-७७

आपका प्रिय शिष्य,
त्रिभुवन नारायण।

२—लिफाफे पर पता लिखते समय पहले नाम, फिर ग्राम, उसके बाद पोष्ट आफिस, तब जिला लिखना चाहिये।

नमूना।

पूज्यपाद

श्रीमान् पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०,

टिकट की जगह

प्रधानाध्यापक, गवर्नमेंट हाई स्कूल,
पो० आ० देवरिया,
ज़िला गोरखपुर।

३—यह सर्ववादि-सम्मत है कि, राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे पता हिन्दीमें ही लिखना चाहिये।

४—यदि उसी जिलेमें दूसरी जगह पत्र भेजना है तो, जिलाका नाम नहीं लिखना चाहिये। यदि किसीकी मार्फत दूसरेके पास पत्र देना है तो, नामके नीचे C\O लिखना चाहिये। यह Care of का संक्षिप्त रूप है। इसका अर्थ है मार्फत। इसकेबाद मार्फतवालेका नाम लिखना चाहिये।

पं० विष्णुजी दीक्षित,
C\O बा० गोवर्द्धनदासजी,
मु० पटेश्वर इत्यादि।

—:*:—

सौरतिथि।

आजकल लोग विना विचारे, अपने प्रत्येक काममें, हमारी जातीयताका नाश करनेवाली अंग्रेजी तारीखों तथा महीनोंका उपयोग कर रहे हैं। यह बड़ी ही लज्जाकी बात है। राष्ट्रीयताके ख्यालसे सब देशहितैषी सज्जनोंको चाहिये कि, वे अपने निजके कामोंमें सौरतिथियोंका ही प्रयोग करें और करावें। वे तिथियाँ भी अंग्रेजी तारीखोंके समान ही होती हैं। चान्द्र तिथियों और महीनोंके जैसा उनमें घटाव-बढ़ाव नहीं है। सौरवर्ष चौदहवीं अप्रेलको शुरू होकर तेरहवीं अप्रेलको समाप्त होता है। महीनोंका नाम राशियोंके नाम पर है। जैसे—१ मेष, (वैशाख, अप्रेल), २ वृष, ३ मिथुन, ४ कर्क, ५ सिंह, ६ कन्या, ७ तुला, ८ वृश्चिक, ९ धन, १० मकर, ११ कुम्भ, १२ मीन (चैत्र, मार्च)। अंग्रेजी ढंगमें भी ऐसा ही लिखा जाता है। इस भाद्रकी जन्माष्टमीको बीस तारीख लिखनी हो तो,

२०-५-७७ लिखेंगे। तिथि-संख्याके लिये तो, अंग्रेजी सा ही नियम है। जैसे,—

"बत्तीस मिथुन दिनेश दिवस, इकतीस शेष गनु;
तीस तुला, घट, मकर, मीन उनतिस वृश्चिक धनु।
विक्रम चौथे बरस, कुम्भ इकतीस गिनिये;
दिये चारसे भाग शेष जो रहे न पैये।"

यह मास सूर्य्य-संक्रान्तिसे शुरू होकर दूसरी संक्रान्ति तक समाप्त होता है और उसीके अनुसार तिथियाँ लिखी जाती हैं। किस मासकी संक्रान्तिमें कितनी तिथियाँ होती हैं, यही इन पद्योंसे जाना जाता है। जैसे,—मिथुनकी संक्रान्ति ३२ दिनों पर समाप्त होती है अर्थात् तीसरा मास, जो मिथुन (आषाढ़) है वह, ३२ दिनोंका होता है। शेष जो मेष (वैशाख), वृष (ज्येष्ठ), कर्क (श्रावण), सिंह (भादों) और कन्या (क्वार) रहे हैं, उनकी संक्रान्ति ३१ दिनों पर समाप्त होती है अर्थात् वे मास ३१ दिनोंके होते हैं। तुला (कार्तिक), घट = कुम्भ (फागुन), मकर (माघ), मीन (चैत) की संक्रान्ति ३० दिनोंकी है। वृश्चिक (अगहन), और धनु (पौष) २९ दिनोंके होते हैं। कुम्भमें हर चौथे वर्ष ३० की जगह ३१ दिन होते हैं। इसमें संवत् विक्रमादित्यका लिया जाता है। ऐसे विचारवाले सज्जनोंको ज्ञानमण्डल (काशी) की डायरी रखनी चाहिये।

संवत् १९७७ की मेष-संक्रान्ति १४ अप्रेलको हुई। यदि उस रोजकी तिथि आपको लिखनी है तो, १-१-७७ लिखियेगा। इसी प्रकार ३०-१-७७ तक लिखते जाइये। फिर दूसरे मासमें १-२-७७। यों ही अगले मासोंकी दिन-संख्या याद रखकर उसकी समाप्तिके बाद दूसरा मास शुरू कर दीजिये। बार २ संक्रान्ति देखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। जीवनमें

एक ही बार संक्रान्ति देखकर आप काम करते जाइये। बङ्गाली, पञ्जाबी, पहाड़ी और अधिकांश दक्षिणी भी प्रायः इन्हीं तिथियोंको व्यवहारमें लाते हैं।

चिन्ह-विचार।

चिन्हसे यति (विराम) और सम्बन्ध आदिका ज्ञान होता है, जिससे वाक्योंका अर्थ बहुत शीघ्र और साफ साफ मालूम हो जाता है। उसके भेद और संक्षिप्त रूप इतने हैं:—स्वल्पविराम या प्राथमिका (,), अर्द्धविराम (;), न्यूनविराम (:) और पूर्ण विराम (।)। प्रश्न-चिन्ह (?), विस्मयादिबोधक चिन्ह या उद्गार-चिन्ह (!), योजक (-), आदेशक (—), बन्धनी ([ ]), कोष्ठक (( )) अवतरणचिन्ह, उद्धरण और कोटेशन (" "), वर्जन (× × ×), रेखाङ्कन (—), त्रुटि (‸) और टिप्पनी (*)। इनमें टिप्पनी अपनी अपनी इच्छा पर निर्भर है,—जैसे चाहें वैसे लिख सकते हैं। अङ्कोंके उपयोगी भी चिन्ह हैं। जैसे,—विभक्त करनेका चिन्ह (‸), जोड़ (+), गुणक (×), घटाव (—) और भाग (÷) इत्यादि।

स्वल्प विराम (,) Comma.

(१) जहाँ पर दोसे ज्यादा संज्ञा-शब्द आये हों, वहाँ उन संज्ञाओंके आगे कामा (स्वल्पविराम) और अन्तमें "और" शब्द लिखकर उस वाक्यकी पूर्ति की जाती है। जैसे,—लोकमान्य, महात्मा गान्धी, लालाजी और शास्त्री, सब उपस्थित थे।

(२) वह, यह, तब, या, और, आदि जहाँ लुप्त हों, वहाँ यह चिन्ह आता है। जैसे,—तुम्हारे नेता जो कहते हैं, ध्यानसे

सुनो। मुझे कब फुरसत होगी, कह नहीं सकता। जब करना ही है, कर डालो। मैंने कह दिया, करो, न करो।

(३) किसी वाक्यका अर्थ जहाँ स्पष्ट करना हो, उसी वाक्य-के अन्त में:—उस वैदिक समयमें, जब भारतकी विद्वत्ता चढ़ी-बढ़ी थी, भारत सबका गुरु था।

(४) अन्यथा, अस्तु, क्योंकि, क्योंकर, तब, तो, बस, नहीं तो, तथापि, फिर, हाँ, पर, यथा, येन केन प्रकारेण, सारांश और कि इत्यादि शब्द-समुदाय या अव्यय किसी वाक्य या पदके आदिमें निर्णयार्थ या व्याख्यार्थ आवें तो, इनके बाद स्वल्पविराम लगता है। जैसे,—राजा कालका कारण है, काल राजाका कारण नहीं; अन्यथा, इस देशकी ऐसी दशा क्यों? तुमको सोचना चाहिये; नहीं तो, देशके पतनका दोष तुम्हारे माथे लगेगा। देशकी नाडी बहुतोंने पहचान ली है; तथापि, हृदयकी कमजोरी उन्हें काम करनेसे रोक रही है। इत्यादि।

(५) कोई पद और उसका सम्बन्धी दूसरा पद, बीचमें किसी वाक्य या पदके आ जानेसे दूर पड़ जाय तो, बीचमें आने वाले उस वाक्य और पदके पहले तथा पीछे स्वल्प विराम देते हैं। जैसे,—उन्होंने तीन-चार सौकी मासिक आमदनी, जो उन्हें पुरोहितीसे होती, छोड़ दी है। इस दुर्घटनासे मेरे मित्र, जिनका मैं मेहमान था, बहुत दुःखी हुए। एक दिन, जब मैं कुछ पढ़ रहा था, एक वाक्य पढ़कर बहुत विस्मित हुआ।

(६) जिन वाक्योंमें यदर्थक या अन्य प्रकारके सर्वनाम आये हों, उन वाक्योंके पीछे:—उसने जो कुछ कहा, सब सत्य है। उसे कितने दिन हो गये, मैं यह नहीं जानता।

(७) जहाँ देखो कि, एक वाक्यका सम्बन्ध दूसरेसे कुछ अलग मालूम हो तो, वहाँ कामा लगाओ। जैसे,—"भारतमें

विवाहकी ऐसी दुर्गति, ऐसी भरमार और ऐसी बुरी चाल हो गयी है कि, 'कशेघाशद' चाहे जो हो, विवाह अवश्य होना चाहिये। लूला हो, लङ्गड़ा हो, अपाहिज हो, वृद्ध हो, कलङ्की हो, विवाह अवश्य करे।" (देशदर्शन, पृष्ठ १५५)

अर्द्ध विराम (;) Semicolon.

(१) जहाँ उच्चारणमें अधिक विलम्ब हो या दूसरे वाक्यका दूरका सम्बन्ध हो, वहाँ यह चिन्ह व्यवहृत होता है। जैसे,—विद्यार्थी अपनेको क्या समझते हैं; उनको संसारमें क्या क्या करना है; देश उन्हीं पर आशा लगाये खड़ा है; उन्हें चाहिये कि, वे सोच-समझकर जीवन-क्षेत्रमें उतरें। उसने भाषण किया; सारी सभा सन्न हो गयी। जो अत्यन्त क्षमाशील है; वही कातर है; वही मरा है; उसीका नाम आलसी है।

(२) यदि किसी वाक्यके लिखनेके समय किसी दूसरी पुस्तकका हवाला देना हो तो। जैसे,—वेदान्त, अध्याय २, पाद १, सूत्र २५; महा०, शान्तिपर्व, अ० ३५, श्लोक ६३; मनु० अ० १, श्लो० १;

(३) क्योंकि, किन्तु, परन्तु, बल्कि, प्रत्युत, इसीसे, अतः, इसलिये इत्यादि शब्दोंके पहले भी अर्द्ध विराम आता है। जैसे,—देशहितके लिये प्राण जायँ, तो भी, हर्ज नहीं; क्योंकि, आत्मा अमर है। उसने तो, वचन दे दिया ही था; परन्तु आप ही बदल गये।

न्यून विराम (:) Colon.

(१) जहाँ पर कोई वाक्य तो, पूरा न होता हो; किन्तु उसका एक बड़ा भाग पूरा होता हो या उसके आगे किसी दूसरेका वाक्य लिखना हो या उत्तर पानेके लिये कोई पद

लिखना हो तो, वहाँ आदेशकके साथ यह चिह्न आता है। जैसे,—नैतिक शिक्षाके लिये किताबें चुनी जाँय तो, ये होंगीः— देशदर्शन, भारतभारती, चाणक्यका अर्थशास्त्र इत्यादि। नीति कहती है :—सत्यम्वद, धर्मं चर इत्यादि। जातिः—ब्राह्मण। आदि।

(२) किसी वाक्यके विवरणके समय, उस वाक्यको लिखनेमें विच्छेद मालूम हो तो, वहाँः—पवित्र पंजाब : उस-पर भीषण अत्याचार।

इसका प्रयोग बहुत कम होता हैः क्योंकि, हिन्दीमें न्यून विरामसे विसर्गकी भ्रान्ति हो सकती है।

पूर्ण विराम (।) Fullstop.

(१) जहाँ वाक्य पूरा होता हो, सामान्यतः किसी वाक्यसे सम्बन्ध न हो तो, वहाँ यह चिह्न देते हैं। जैसे,—खूब पढ़ो। सभी सभाओंमें जाया करो। हिन्दीकी अच्छी अच्छी किताबें बराबर पढ़ो। पाठ्य विषयके अतिरिक्त बाहरी किताबें भी पढ़ो। समाचारपत्रोंको पढ़ो।

प्रश्नचिन्ह (?) Note of Interrogation.

(१) प्रश्नसूचक वाक्यके पीछे यह चिन्ह देते हैं। जैसे,— कितना दहेज दोगे ? किसका दोष है ? तुमने किस वीरता पर मुझे वरनेका साहस किया था ?

(२) जहाँ प्रश्नका शब्द या वैसा ही अर्थवाला कोई दूसरा शब्द वाक्यमें रहे तो, प्रश्न-चिन्ह नहीं आता। जैसे,—आप कौन हैं, यह प्रश्न करके स्तब्ध रह गया। रामजी यहाँ आया है, गया तो नहीं, मैं यह पूछता हूँ।

विस्मयादिचिह्न (!) Note of Admiration.

(१) जहाँ पर हर्ष, शोक, विस्मयादिका वर्णन हो या अत्यन्त व्यग्रताके साथ कोई भाव प्रकाशित करना हो तो, वहाँ यह चिन्ह लगता है। जैसे,—जीत लिया! हा लो० तिलक! चल बसे! आप कहाँ जायँगे! लङ्का! राम! राम! लङ्का तो नास्तिक जाते हैं! जहाँ ऐसी बातें हों, वहाँ उन्नति कैसी! आश्चर्य!

(२) यदि किसीको सम्बोधन करनेमें कोई आन्तरिक भाव प्रकट करना हो तो, सम्बोधनके पीछेः—राम! यह तू क्या करता है! अरे! देखो! चोर! चोर!! चोर!!!

(३) पर सामान्य सम्बोधनके पीछे प्रायः कामा देते हैं। जैसे,—भाई, जानते हो, राजनीतिक सुधारसे क्या फायदा है? उसने कहा,—सब कुछ उसीमें है।

योजक (-) Hyphen.

(१) सामासिक पदोंके और मुहाविरेके द्विरुक्त शब्दोंके बीच इसका प्रयोग होता है। जैसे,—देश-दर्शन, भारत-दशा-सुधार, जातीय-महासभा, धीर-वीर, लिखना-पढ़ना, सुनते-सुनाते।

आदेशक (—) Dash.

(१) किसी पुस्तकके लेखकके नामके पहले (जब उस पुस्तकके उद्धृत वाक्योंके नीचे लिखते हैं) यह चिन्ह देते हैं। जैसे,—"स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।"

—लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक।

(२) पत्रमें अभिवादन-सूचक शब्दके बाद और व्याख्यान-दाताके, सभापति और श्रोताओंके, सम्बोधन करनेके बाद,—पूज्यपाद पण्डितजी, प्रणाम—, माननीय सभापति—, श्रोतृगण—।

(३) समय तथा रुपया-आना-पाईमें भी आदेशकका प्रयोग करते हैं। जैसे,—सौर १३—५—७७; सन्ध्या ६—३०; १५ रु०—१० आ०—६ पाई—इत्यादि।

(४) किसी वाक्यका विवरण करनेमें, किसी वाक्यका उदाहरण देनेमें या किसी दूसरेके वाक्योंका उद्धरण करनेमें जब "कि" शब्द न रहे तो, विवरण, उदाहरण, उद्धरणके पहले यह चिन्ह देते हैं। जैसे,—रामचन्द्र—दशरथका सर्वोत्तम पुत्र। मैं कहता हूँ—देशकी भलाई करनी है तो, बाल-विवाह रोक दो। यहाँ बड़ी २ सामाजिक कुरीतियाँ हैं,—बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, कानफुँकाई इत्यादि। यह मैं ही नहीं कहता—भगवान् बुद्धने भी कहा है—"हम अपने भाग्यके आप मालिक हैं।"

(५) किसी वक्तव्यके भीतर यदि दूसरा वक्तव्य प्रकाशित करना हो तो, उसकी दोनों तरफ डैश देते हैं। जैसे,—ईश्वर—चाहे रहीम कहो या राम—एक ही है। भीष्मने कहा है—और मैं उससे सहमत हूँ—"भाग्यसे कर्म प्रबल है।" यह भारतके लिये—विशेषतः यू० पी० के लिये—लज्जास्पद है, कितना दहेज दोगे—इस प्रकार मोलाई करना।

(६) कहीं कामा और बन्धनीकी जगह भी आदेशक लगाते हैं। जैसे,—"हमारा जीवन—हमारी जिन्दगी—पूरे तौर पर सार्थक हो जाय।"

उद्धरणचिन्ह (“ ”) Inverted comma.

(१) दूसरेके वाक्यको अविकल उद्धृत करनेमें, किसी लेखमें पद या वाक्य पर अधिक जोर देनेमें यह चिन्ह देते हैं। जैसे,—कृष्णने गीतामें कहा है, “कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।” नीतिकारोंका कहना है, “स्वर्ग और यशके लिये परोपकार नहीं किया जाता, प्रत्युत समाज-शान्तिके लिये किया जाता है।” “लोकमान्यकी अचानक मृत्युने देशको बहुत धक्का पहुँचाया है।”

बन्धनी, कोष्ठक ([ ]) (()) Parenthesis, Brackets.

(१) किसी पद या वाक्यका अर्थ समझाना हो या कोई दूसरा वाक्य लिखना हो तो, यह चिन्ह लगाते हैं। जैसे,— लोगोंका रङ्ग (वर्ण)। ज्योतिषका हिसाब लगाओ (यात्रा दिखाओ)। गोमाताके लिये भारतने क्या प्रबन्ध किया है? कुछ भी नहीं। [शोककी आवाज]

(२) किसी व्यक्ति या ग्रन्थके रचना-विषयोंको उद्धृत करना हो तो, उस व्यक्ति या ग्रन्थका नामादि बन्धनी या कोष्ठकमें उद्धृत करते हैं। जैसे,—“मामेकं शरणं व्रज” (कृष्ण) “तत्त्व-मसि” (छान्दोग्य)

(३) गौण मानकर किसी पदवी तथा स्थानको लिखनेके समय भी उनको बन्धनी या कोष्ठकमें रखते हैं। जैसे,—पं० रघुनाथ त्रिवेदी (धर्मशास्त्री)। प्रह्लाददास, (बनारस)।

वर्जन (× × × ×) Mark of Ellipses.

(१) जहाँ पर किसी वाक्य, पद या वर्णका, किसी कारणसे परित्याग करना हो, वहाँ यह चिन्ह देते हैं। जैसे,—माननीय

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी कहते हैं कि, "गत १६ वर्षोंसे मैंने × × × ×एक समय नियत कर लिया है। उसी समय खाता हूँ × × × ×। फल यह हुआ है कि, × ×मैं एक दिनके लिये भी बीमार नहीं हुआ।" (दे० द० पृ० ६४)

त्रुटि (^)

जहाँ कहीं लेख्य विषयमें छूट हो जाती है, उसके संशोधनमें यह चिन्ह देकर लिखते हैं। जैसे,—महादेवजी
पर
कैलास ^ रहते हैं।

विशेष नियम।

(१) पद्यमें प्रथम और तृतीय चरणके अन्तमें स्वल्प विराम और द्वितीयके अन्तमें अर्द्ध विराम तथा चतुर्थमें पूर्ण विराम देते हैं। जैसे,—

"जे दिन देखे वे कुसुम, गयी सो बीति बहार;
अब अलि रही गुलाब की, अपत कटीली डार।"

चिन्ह-विचारके जितने नियम लिखे गये हैं, उनमें सब लेखकोंकी एक राय नहीं है। व्यक्तिगत भावोंके अनुसार भी चिन्हों का उपयोग होता है। पर मेरे ख्यालसे यदि चिन्होंका एक नियमित-रूपसे व्यवहार हो तो, भाषाके अधिक प्रचार में अच्छी सफलता होगी। जिस लेखकने अपने ग्रन्थमें चिन्हों-का व्यवहार नहीं किया है, उसके ठीक २ अभिप्राय समझनेमें बड़ी अड़चन पड़ती है। इसका उदाहरण संस्कृत और हिन्दी-का पुराना साहित्य है।

छन्द ।

मात्रा और वर्णके भेदसे दो प्रकारके छन्द हैं । गुरु, लघुके भेदसे मात्राएँ भी दो हैं । ह्रस्वको लघु कहते हैं और दीर्घको गुरु । आगे यदि संयुक्त अक्षर हो और अनुस्वार या विसर्ग-युक्त ह्रस्व हो तो, ह्रस्वको भी दीर्घ कहते हैं । पादके अन्त्य अक्षर विकल्पसे गुरु होते हैं । गुरुमें दो मात्राएँ होती हैं । गुरु भी यदि लघुसा शीघ्र पढ़ दिया जाय तो, उसे एक मात्राका गिनते हैं । गुरुका चिन्ह (ऽ) और लघुका चिह्न (।) है ।

मात्रा-छन्दमें किसी वर्णकी आवश्यकता नहीं होती, केवल मात्राओंको गिना जाता है । वर्णके छन्दोंमें गण होते हैं । वे आठ हैं । तीन २ अक्षरका एक २ गण होता है ।

"आदि मध्य अरु अन्तमे, हो गुरु भ, ज, स प्रमाण ।
यदि लघु यगण रगण तगण, म, न गुरु लघु क्रम जान ॥"

अर्थात् तीन अक्षरोंमें पहला गुरु हो और दो लघु हों तो, 'भगण' होता है । जैसे कारण । बीचका गुरु हो और इधर उधर लघु हो तो, 'जगण' । जैसे पहाड़ । अन्तमें गुरु हो और पहले दो लघु हों तो, सगण । जैसे वसुधा । यों ही आदि, मध्य और अन्तमें लघु हों तो, क्रमशः यगण, रगण और तगण होते हैं । आदि, मध्य और अन्तमें सब गुरु ही हों तो, मगण और सब लघु हों तो, नगण होता है ।

जिस पद्यके पहले और तीसरेमें तेरह २ मात्राएँ हों और शेषमें ग्यारह हों तो, वह दोहा होता है । जैसे,—

"सो अनन्य जाके असी, मति न टरइ हनुमन्त ।
मैं सेवक सचराचर, रूप स्वामि भगवन्त ॥"

सोलह मात्राओंका चौपाई छन्द होता है:—

"साधु चरित सुभ सरिस कपासू। निरस विसद गुणमय फल जासू॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। वन्दनीय जेहि जग जस पावा॥"

दोहेको उलट देनेसे सोरठा हो जाता है अर्थात् पहले, तीसरेमें ११, शेषमें १३ मात्राएँ हों तो, सोरठा होता है।

"मूक होहि वाचाल, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन।
जासु कृपासु दयाल, द्रवहु सकल कलिमल दहन॥

प्रत्येक चरणमें २४ मात्राएँ होनेसे रोला छन्द होता है:—

"जहाँ परस्पर प्रेमलता है नहिं फहराती,
वहाँ ध्वजा है कलह-कपटकी नित फहराती।
प्रणय-कुसुममें कीट स्वार्थका जहाँ समाया,
वहाँ हुई सुख और शान्तिकी कलुषित काया॥"

पहले दोहा, बाद रोला छन्द हो तो, कुण्डलिया छन्द होता है। इसमें चौबीस २ मात्राओंके छः चरण और दोहेका पहला पद रोलेके अन्तमें और अन्तका आदिमें होने चाहिये। जैसे,—

"कमरी थोड़े दामकी, आवै बहुतै काम,
खासा मलमल जो फवै, उनकर राखै मान।
उनकर राखै मान, बुन्द जहँ आगे आवै,
बकुचा बाँधे और रातको झारि बिछावै।
कह गिरिधर कविराय मिलत है थोड़े दमरी,
सब दिन राखै साथ बड़ी मर्य्यादा कमरी॥"

जिसके प्रत्येक चरणमें २८ मात्राएँ हों, वह हरिगीतिका छन्द है। उसे "छन्द" भी कहते हैं। वह रामायणमें बहुत है।

"उस ब्रह्मचर्य्याश्रम-नियमका ध्यान अबसे हट गया।
सम्पूर्ण शारीरिक तथा वह मानसिक बल घट गया॥
है हाय! काहेके पुरुष अब जब कि पौरुष ही नहीं।
निस्तब्ध पुतले भी भला पौरुष दिखा सकते कहीं!" भा०भा०।

भुजङ्गप्रयातमें चार चार यगण होते हैं:—

"सभी खो गये हा! हमारे पुराने।
बड़े चाल जो सभ्यताके निशाने॥
नकाले हुए सिर्फ हैं दूसरोंको।
गहें दोष जानें न जातीयताको॥"

द्रुतविलम्बितका यह लक्षण है:—

द्रुतविलम्बित जानु नभभरसे। जैसे,—
"यदि न सूझत हा! सब आर्यको,
घटत धर्म्म सनातन की यहाँ।
भरत-भूमि पवित्र नशायको,
चलत धर्म्म इसाइनके यहाँ।"

मालिनीका यह लक्षण है:—

ननमयययुता हो मालिनी आठ सातो। जैसे,—
"निज करगत मुक्ती आप देते बिसार,
जनहित करते हैं आप वेद-प्रचार।
सब विधि दिखलाते आप सर्वोपकार,
प्रणमु तव पदोंमें आज सर्व प्रकार॥"

कवित्तका यह लक्षण है:—

एकतीस अक्षर कवित्त हर पाद बीच,
सोलह व पन्द्रह विराम करता रहै। जैसे,—

"वेदमत सोधि २ देखिकै पुरान सबै,
सन्तन असन्तको भेदको बतावतो।
कपटी कपूत कूर कलिके कुचाली लोग,
कौन राम नामहूकी चरचा चलावतो।
वेनि कवि कहै मानो २ रे प्रमान यही,
पाहनसे हिये कौन प्रेम उमगावतो।
भारी भवसागरसे कैसे जीव होते पार,
जोपै रामायण ना तुलसी बनावतो।"

इसके तीन भेद हैं। अन्तपादमें एक और दो वर्ण बढ़ा देनेसे और ३१ वालेमें अन्त्य गुरु, ३२ वालेमें लघु; पर द्विरुक्त करके आता है। ३३ में अन्त्य लघु होता है।

सवैयाका लक्षण,—

"सात भकार कहो तुम दो गुरु अन्तहु मत्त गयन्द सवैया।"

उदाहरण:—

"शेस गनेस महेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरन्तर गावैं,
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड अछेद अभेद सुवेद बतावैं।
नारदसे शुक व्यास रहें पचि हारि तऊ पुनि पार न पावैं॥
ताहि अहीरकी छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचावैं।"

इसके अन्तमें एक गुरु हो तो, 'मदिरा' सवैया होता है। आठ भगण हों तो, किरीट सवैया होता है। सात भगण हों तो, दुर्मिल सवैया होता है। आठ सगण और अन्तमें गुरु हो तो, सुन्दरी सवैया होता है।

दुर्मिलका उदाहरण:—

"पद कञ्जनि मञ्जु बनी पनही धनुही सर पंकज पाणि लिये,
लरिका संग खेलत डोलत है सरयू तट चौहट हाट हिये ।
तुलसी अस बालक सो नहिं नेह कहा जप योग समाधि किये ।
नरते खर शूकर श्वान समान कहौं जगमें फल कौन लिये ॥"

——:०:——

अनुवाद ।

किसी भाषाका जब दूसरी भाषामें अनुवाद करना हो तो, यह ध्यान बराबर बना रहना चाहिये कि, जिस भाषामें मैं अनुवाद कर रहा हूँ, उस भाषाकी पद्धति क्या है, उसका पदविन्यास ठीक हो रहा है कि, नहीं और जिस भाषाका अनुवाद कर रहा हूँ, उसके किसी शब्दका अर्थ तो, नहीं छूट रहा है ? बस, इतना ध्यान काफी है । हाँ, अनुवादकी भाषा पर भी ज्यादा ध्यान रहना चाहिये कि, वह शुद्ध और सजीव होती है या नहीं ? उसमें कोई त्रुटि तो, नहीं होती ? आज-कल देखनेमें आता है कि, अनुवादक किसी भाषाका अनुवाद जब हिन्दीमें करते हैं तो, प्रायः उसी भाषाकी पद्धति हिन्दीमें भी रख देते हैं, जिससे हिन्दी अपने स्वरूपको खोकर कहीं तो, अंग्रेजीकी लाइन और कहीं बङ्गालीनुमा ढँग पकड़ रही है । नीचे अनुवादका सरल नमूना दिया जाता है:—

"Two things are closely joined together, the education, the training and development of women; and the greatness of a nation. When these women were the Indian mothers, heroes and

Rishis were born; and now out of child-mothers cowards and social pigmies come forth-cause and effect! still in your power to change." (दे० द०)

अनुवादका अशुद्ध रूप :—

'दो चीजें बहुत मिलती-जुलती हैं:—आपसमें। (१) शिक्षा, मानसिक तथा शारीरिक उन्नति स्त्रियोंकी और (२) तरक्की किसी जातिकी, जब ये औरतें भारतमाताएँ थीं, वीर और ऋषि पैदा होते थे। इस समय बाल-माताओंसे कायर साधारण बौने पैदा होते हैं। कारण और कार्य्य, इन दोनोंको तबदील करना तुम्हारे हाथमें है।'

इसका शुद्ध रूप:—

'(१) स्त्रियोंकी शिक्षा, मानसिक, धार्मिक तथा शारीरिक उन्नति और (२) किसी जातिकी बड़ाई,—इन दो बातोंका आपसमें बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब भारतमें ऐसी (योग्य) माताएँ थीं तो, वे योद्धा और ऋषिरत्न (सन्तानें) उत्पन्न करती थीं: पर अब (मूर्खा) बाल-माताओंसे कायर और कलङ्कित (कुपुत्र) पैदा होते हैं। कारण और कार्य्य, इनको सुधारना (कारणको सुधार कर कार्य्यको सिद्ध करना) अब भी तुम्हारे हाथमें है।'

ऐसी शैली पर विशुद्ध अनुवाद करना चाहिये, जिससे अनुवाद पढ़ने वालेको मालूम न हो कि, यह किसीका बिलकुल अनुवाद है।

संस्कृतका नमूना:—

"एवम्वादिनम्भगवन्तमग्निवेश उवाच, "किन्तु खलु भगवन्! नियतकालप्रमाणमायुः सर्वमवेति।" "इह अग्निवेश! भूतानामायुर्युक्तिमपेक्षते।"

अशुद्ध:—

'इस प्रकार कहने वाले भगवान् आत्रेयसे अग्निवेश बोले:—क्या महाराज ! सब आयु नियत काल वाली होती है या नहीं ? भगवान् बोले, यहाँ पर अग्निवेश ! जीवोंकी आयु युक्तिकी अपेक्षा करती है ।'

शुद्ध:—

'जब भगवान् आत्रेय इस तरह कह रहे थे, तब अग्निवेशने उनसे पूछा:—महाराज ! मनुष्यके जीवनकी कोई अवधि है या नहीं ? भगवान् बोले:—अग्निवेश ! इस संसार में मनुष्योंकी आयु युक्तिके ऊपर निर्भर है अर्थात् जो जितनी सावधानीसे रहता है वह उतने ही ज्यादा दिन जी सकता है।'

यदि अनुवाद करते समय किसी शब्दका अर्थ न मालूम हो तो, वहाँका भाव समझ कर उस शब्दका अर्थ लिख सकते हैं । बीचमें किसी शब्दको छोड़ना न चाहिये। अक्षरशः अनुवाद करना भी ठीक नहीं है ।

——:*:——

प्रबन्ध-रचना ।

सामान्यतः चार प्रकारके प्रबन्ध होते हैं:—वर्णनात्मक, कथात्मक, व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक ।

वर्णनात्मक ।

वर्णनात्मक निबन्ध उसे कहते हैं, जिसमें किसी देखी या सुनी वस्तुका वर्णन हो । जैसे,—"कलकत्तेका अजायबघर", "कलकत्तेकी विशेष जातीय महासभा", "सारनाथ", "नीमवृक्ष," "काशीकी सेवासमिति" इत्यादि ।

कथात्मक ।

कथात्मक उसे कहते हैं, जिसमें सामाजिक, पौराणिक, घटनात्मक या किसी पुरुषके जीवनचरित्रकी कथा कही जाय। जैसे,—"भारतमें मोगलराज", "शिवाजी," "सत्य हरिश्चन्द्र", "लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक", "अंग्रेज़ी राज्य" ।

व्याख्यात्मक ।

व्याख्यात्मक निबन्ध उसे कहते हैं, जिसमें किसी अदृश्य पदार्थकी व्याख्या हो। जैसे,—"परोपकार," "देशसेवा," "विद्यार्थि-जीवन," "धर्म," "स्वास्थ्यरक्षा" और "स्वतन्त्रता" ।

आलोचनात्मक ।

आलोचनात्मक उसे कहते हैं, जिसमें तर्कवितर्क द्वारा विज्ञानानुसार कुछ आलोचना की गयी हो। जैसे,—"रेलसे लाभ या हानि," "भारतमें बालविवाह," "विद्यार्थी और ब्रह्मचर्य्य" इत्यादि ।

प्रबन्ध लिखनेका नियम ।

पहले पहल अभ्यासके लिये चाहिये कि, किसी पुस्तक या समाचारपत्रको पढ़कर उसका संक्षेप अपनी भाषामें लिखे और यह उसी समय ख्याल कर ले कि, इसमें इतने मुख्य विषय हैं; अतः इतने प्रकरण होंगे। इस तरह जब कोई निबन्ध लिखना है तो, प्रथम उसके मुख्य विषयोंको नोट कर ले और उन्हीं के आधार पर समय और लाइनका भी विचार कर ले। फिर, लिखना प्रारम्भ करे। उदाहरणार्थ कुछ नमूने यहाँ दिये जाते हैं।

वर्णनात्मक ।

किसी जीवका वर्णन लिखना है तो, सोचना चाहिये कि,

वह किस प्रकारका जीव है, उसका आकार, स्वभाव, भोजन क्या है, वह कहाँ पाया जाता है और वह कैसा उपयोगी होता है। अन्तमें उपसंहार लिखना चाहिये, जिससे लेख ललित और दर्शनीय हो।

गौ।

यह एक सींगवाले पशुओंमेंसे लम्बा, चौड़ा जन्तु है। इसके फटे हुए खुर होते हैं। यह लाल, काला, सुफ़ेद, चित्र आदि अनेक रङ्गोंका पशु है। इसका स्वभाव सरल होता है। इसका भोजन घास है। यह प्रायः सारे देशोंमें पाया जाता है। सामान्यतः इसके नरको बैल, साँड़ आदि कहते हैं। मादाको गाय कहते हैं। देश-भेदसे इसके आकारमें भी भेद होता है। यमुना-पार, गुजरात, नेपाल आदि देशोंमें बड़े आकारमें पाया जाता है। दूध अमृतके समान लाभकारी है। मूत्र और गोबरका ऐसा स्वाद होता है कि, किसी चीजका भी स्वाद उसकी बराबरी नहीं कर सकता। यह मनुष्यका, एक प्रकारसे, जीवन देनेवाला पशु है। इसीलिये इसे सभी मुल्कके सभी प्राणी पोसते-पालते हैं।

वैद्यकशास्त्र कहता है कि, दुनियामें ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसमें शरीरके सब अंशोंको बढ़ानेकी शक्ति हो। किसीमें मांस बढ़ानेकी शक्ति है तो, किसीमें मेदा बढ़ानेकी; पर एक गायका दूध ही ऐसी वस्तु है, जिसमें शरीरकी सारी चीजोंको बढ़ानेकी शक्ति है। दूसरी कोई चीज न खा करके भी केवल गायके दूध पर मनुष्य जीवन बिता सकता है। भारतीयपनेकी दृष्टिसे देखा जाय तो, इसकी और महिमा बढ़ जाती है; क्योंकि, यहाँका सारा कारबार गौ पर ही निर्भर है। इत्यादि।

गौके "गो-रक्षा," "गायके दूधका उपयोग," "भारतमें गौओंकी दशा", "गोमहिमा", "प्राचीन-गोरक्षा", "गौ और कृष्ण", भारतमें गोधन" इत्यादि एक २ विषयको लेकर अनेक व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक प्रबन्ध भी लिखे जा सकते हैं।

कथात्मक ।

कथात्मक निबन्धमें जितनी बातें तुम जानते हो, उन्हींमें मुख्य बातोंको रखकर उतने प्रकरण बना लो। जैसे वीर अभिमन्युकी कथा लिखनी है तो, उसका जन्म, कुल, बाल्य-काल, विद्याध्ययन, विवाह-संस्कार, महाभारत और वीरता आदि लिखकर अन्तमें उसकी वीरगतिको दिखाते हुए उप-संहार करो।

अभिमन्यु ।

यह एक वीर बालक था। इसका जन्म प्रसिद्ध क्षत्रिय पाण्डवके कुलमें हुआ था। इसके पिता भारतके प्रसिद्ध वीर अर्जुन थे और इसकी माता भारतके राजनीतिज्ञोंमें अद्वितीय राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्णकी बहन सुभद्रा थी। यह बालक जब गर्भमें था, तभी सुभद्राको अर्जुनने व्यूह-भेदन-कला सिखायी थी, जिससे इस लड़केमें बेपढ़े-पढ़ाये व्यूह-भेदनकी विद्या आ गयी थी। अतः यह सिद्ध बात है कि, माता शिक्षिता हो तो, लड़केको जैसा चाहे वैसा बना सकती है।

बाद, बालक अभिमन्युका ब्रह्मचर्य्याश्रममें प्रवेश हुआ। जब वह क्षत्रियोचित शिक्षा पा रहा था, तब विराट्के यहाँ उसके पिता अर्जुन बृहन्नलाके रूपमें रहकर स्त्रियोंको गान-विद्या सिखा रहे थे। इसी बीचमें विराट्के साथ दुर्योधनादिकोंका संग्राम हुआ, जिसमें अर्जुनने सबको परास्त किया।

इससे प्रसन्न होकर अपनी लड़की उत्तराको विराट्ने अर्जुनको देना चाहा; पर सभ्य-शिरोमणि भारतके वीर अर्जुनने उसे अपनी शिष्या समझकर लेनेसे इनकार किया। फलतः, अभिमन्युका ब्रह्मचर्य्य पूरा न होने पर भी उत्तरा उसके गले लगायी गयी। यही कारण है कि, वीर अभिमन्युकी, महाभारतके बीच, अकाल मृत्यु हुई।

जब महाभारत हो रहा था, तब सब वीर अपनी २ वीरता दिखा रहे थे। हमारे चरितनायक किससे कम था कि, वह अपनी वीरतासे बाज आवे। अन्तमें जब गुरु द्रोणने देखा कि, अर्जुन और श्रीकृष्ण दूसरी तरफ चले गये हैं, तब एकाएक व्यूहकी रचना करके युधिष्ठिरसे बोले कि, "या तो इस व्यूहको भेदन करो या दुर्योधनको विजयपत्र लिख दो।" अब युधिष्ठिर बड़े घबराये। वहीं वीर बालक अभिमन्यु खड़ा था। वह अपने चाचेकी यह विकलता देख चट व्यूहमें घुस पड़ा और सिंहके समान गर्जना करता हुआ तथा सेनाको चीरता हुआ अन्दर जा पहुँचा तथा द्रोण, कर्ण, दुर्योधन आदि सभी महारथियोंसे यह वीरकेसरी बालक अकेला ही लड़ा। अन्तमें इस वीरने विरथ हो खड्ग लेकर युद्धभूमिमें पैतरा देते हुए जयद्रथके हाथसे वीरोचित गतिको प्राप्त किया एवं सदाके लिये अपने उज्ज्वल यशको भारतके भावी लालोंके लिये छोड़ गया।

व्याख्यात्मक।

इसमें विषयकी व्याख्या, उसकी आवश्यकताओंके वर्णन और उदाहरण द्वारा उसके रूपको स्पष्ट किया जाता है।

स्वतन्त्रता।

यह मनुष्य मात्रका स्वाभाविक अधिकार है। इसीके लिये

भारतवर्षमें क्या, सभी देशोंमें, सभी मनुष्य सर्वदा यत्न करते रहते हैं। नहीं, नहीं, मैं भूलता हूँ; मनुष्य मात्र ही नहीं, प्रत्युत स्थावरसे लेकर जङ्गमतक इसके प्रेमी हैं। देखो, यदि कोई पौधा किसी पौधेके तले पड़ जाय तो, वह दबने लगता है; उसका विकास हो ही नहीं सकता है। इसी कारण बागका बागवान उस पौधेको उठाकर दूसरी जगह लगाता है। वह बराबर यही देखा करता है कि, कोई पौधा किसी पौधेके तले न पड़ने पावे, नहीं तो, वह दबकर कुम्हला जायगा। यही हालत पशु-पक्षियोंमें भी है। जो पशु स्वतन्त्र विचरण करते हैं, वे कैसे हृष्ट-पुष्ट हैं। साँड़को ही देखिये। उसीका भाई, जो बँधा हुआ है, कैसा दुःखी रहता है। ऐसे ही पक्षियोंको भी देखिये। इन्हें मनुष्य पकड़कर कितने प्रेमसे रखते और उत्तमसे उत्तम खाद्य पदार्थ देते हैं; तो भी ये वैसे सुखी नहीं रहते, जैसे कि, ये स्वतन्त्र विचरणमें सुखी रहते हैं। किसी कविने कहा भी हैः—

"पराधीनता दुख महा, सुख जगमें स्वाधीन;
सुखी रमत शुक वन विषै, कनक पींजरे दीन।"

भारतवर्षमें तो, न जाने, कहाँसे कायरपनका भूत सवार हो गया है कि, यह देश सदियोंसे पराधीनताकी बेड़ीमें जकड़ा हुआ है। यहाँ पर दर्शनोंको उठाइये तो, एक स्वरसे आवाज आ रही है कि, मनुष्यका अन्तिम ध्येय मुक्ति, (स्वतन्त्रता) है। धर्मशास्त्रोंको देखिये तो, "सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखं। एतद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुख-दुःखयोः॥" ऐसे २ वाक्य डङ्केकी आवाजसे स्वतन्त्रताकी घोषणा कर रहे हैं।

शोक कि, जहाँ पर वेन जैसा अत्याचारी राजा, स्वतन्त्रताका अपहरण करनेसे ही, सिंहासन-च्युत किया जाता है, जहाँ

पर नित्य संध्यामें "अदीनाः स्याम शरदः शतम्" का पाठ पढ़ाया जाता है, वहीं स्वतन्त्रताका ऐसा अभाव कि, बाबाजी लोग कहते हैं, "मुक्तिके लिये मैं यत्न करता हूँ, संसारसे मुझे क्या मतलब ?" परन्तु उनके पाञ्चभौतिक शरीरमें, मनमें, रग-रगमें भीषण डर घुसा हुआ है ! हा ! इन महात्माओंके लिये भी स्वतन्त्रता आकाश-कुसुमसी हो रही है !!!

हाँ, अब देशमें इसकी लहर उमड़ी है; लोग जाग रहे हैं। अब लोकमान्यके स्वराज्य-बिगुलने सबकी निद्रा तोड़ी है। आशा है, भारतमें भी, कुछ ही दिनोंमें, स्वतन्त्रता-देवीका वास होगा।

आलोचनात्मक ।

आलोचनात्मक निबन्ध व्याख्यात्मक निबन्धसा ही लिखा जाता है। केवल उसमें बीच बीचमें तर्क-वितर्कसे खण्डन-मण्डन किया करते हैं।

भारतमें बाल-विवाह ।

आज मुझे "भारतमें बाल-विवाह" शीर्षक लेख लिखनेको मिला है। यह ऐसा विषय है कि, इसकी तरफ ख्याल करनेसे एक बार शिरमें चक्कर आ जाता है! आखें भर जाती हैं !! यह वही देश है, जहाँ कन्या पूर्ण शिक्षिता होकर वरको वरण करती थी; आज उसी देशमें ऐसी कुरीति ! इस पर भी धर्म-शास्त्रोंके ढेरके ढेर वचन पेश किये जाते हैं कि, बाल-विवाह धर्म्म-शास्त्र सम्मत है !!! हाय रे देश ! तू जल्दी रसातल क्यों नहीं चला जाता ! मैं, समय मिलने पर, इन वितण्डावादियोंसे लड़ लूँगा; परन्तु आज मुझे युक्तिसे देखना है कि, "बाल-विवाह" कहाँतक देशकी हानि कर रहा है।

कोई अङ्ग जबतक पूरा पूर्ण न हो जाय, तबतक उससे काम लेनेसे वह नष्ट हो जाता है । मनुष्यका वीर्य्य स्वभावतः २५ वर्ष पर पुष्ट होता है । उसके अन्दर उसकी क्षय कर देना क्या है, उस मनुष्यके जीवनको नाश करना है। साथ ही, उसकी सन्तानको भी उस अपुष्ट वीर्य्यसे पैदा करके जीवन भरके लिये रोगी, आलसी, निरुद्यमी बनाकर छोड़ देना है । यही कारण है कि, आज हिन्दूजाति दिनोंदिन क्षीण होती जाती है । माली लोग, यदि पेड़ोंमें, छोटेपनमें फल लगने लगता है तो, उसे तोड़कर फेक देते हैं और कहते हैं, "हाँ, अभी फलने लगा ! जल्दी सूख जायगा ! फल छोटा हो जायगा !" पशुओंको बचपनमें जोड़े नहीं लगने दिया जाता । पर अफसोस कि, इस पवित्र संस्कारके लिये यहाँ कुछ विचार ही नहीं ! लड़का १० का है तो, लड़की २० की, लड़का ५० का है तो, लड़की १० की । ऐसा अन्धेर और दोहाई धर्मशास्त्रकी ! धर्मशास्त्रोंकी क्या दोहाई देते हो ? तुम्हें आँखें नहीं ? खेतमें बोनेके लिये बीज खरीदते हो तो, क्या नहीं देखते हो कि, बीज पुष्ट है कि, नहीं ? फिर कैसी यहाँ धर्म्मशास्त्रकी दोहाई ? धर्म्मशास्त्र क्या तुम्हें मनमाना करनेको कहता है ? वह तो कहता है:—

"वेदानधीत्य वेदौ वा वेदम्वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुतब्रह्मचर्य्यो गृहस्थाश्रममाविशेत् ॥"

(समस्त वेदोंको, असमर्थतामें दो को ही,—अन्ततः एक को पढ़कर और ब्रह्मचर्य्यको अक्षुण्ण रखकर सादी करे ।)

"स सन्धार्य्यः × × × योऽधार्य्यो दुर्वलेन्द्रियैः ।" आदि ।

२५ वर्ष पर ब्रह्मचर्य्य पूर्ण होता है; क्योंकि, १०० वर्षकी आयुमें चार हिस्से करने पर चौथा हिस्सा २५ ही होता है ।

२५ वर्ष तक इन्द्रियाँ भी दुर्बल रहती हैं। अतः २५ के पहले विवाह निन्द्य है। और देखो, सुश्रुताचार्य्य भी नगारा पीट रहे हैं कि,—

"ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्,
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते।
जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः,
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानञ्च कारयेत्॥"

मतलब यह कि, २५ वर्षसे कम पुरुषसे १६ वर्षसे कम स्त्रीसे जायमान सन्तति पहले तो, मातृगर्भमें ही विपत्तिमें रहती है; फिर यदि वहाँसे बची तो, अल्पायु होती है। यदि कुछ दिन बची भी तो, हीनवीर्य रहती है। इसलिये कभी भी बाल्यपनमें गर्भाधान नहीं होना चाहिये।

इससे भी तुम्हारा बाल-विवाह बुरा सिद्ध होता है। फिर क्यों लकीरके फकीर होकर देशको सत्यानाश करते हो? भलाईकी दृष्टिसे भारतमें बाल-विवाह जहाँतक हो सके, अति शीघ्र उठा देना चाहिये।

——:*:——

कुछ कहावतें।

१ अरहर की टट्टी, गुजराती ताला। २ अपनी २ डफली, अपना २ राग। ३ अनमांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख। ४ अस्सीकी आमद चौरासीका खर्च। ५ अधजल गगरी छलकत जाय। ६ आखोंके अन्धे, नाम नयनसुख। ७ आमके आम, गुठलियोंके दाम। ८ उधारका खाना, फूसका तापना। ९ उत्तम खेती मध्यम बान, अधम चाकरी भीख निदान। १० उलटा चोर कोतवाले डाटे। ११ उद्योगिनं पुरुषसिंह-मुपैति लक्ष्मीः। १२ ऊधोका लेना न माधोका देना। १३ ऊँची दूकान फीका पकवान। १४ उवरे अन्त न होहि निबाहू, कालनेमि जिमि रावण राहू। १५ एक अनार सौ बीमार। १६ ओखली सिर दिया तो, मुसलोंका क्या डर। १७ अन्धेर नगरी चौपट

राजा, टका सेर भाजी टका सेर खाजा। १८ अन्धा बाँटे रेवड़ी फिर फिर अपने ले। १६ करघा छोड़ तमासे जाय, नाहक चोट जुलाहे खाय। २० कहाँ राजा भोज कहाँ भोजवा तेली। २१ कालके हाथ कमान, बूढ़ा बचा न ज्वान। २२ कबीरदासकी काली कमरिया चढ़े न दूजो रङ्ग। २३ कै हंसा मोती चुगै, कै लङ्घन मरि जाय। २४ कोडी न हो पास में, मेला लगे उदास। २५ का वर्षा जब कृषी सुखानी, समय चूक फिर का पछतानी। २६ खर्रा मजूरो चोखा काम। २७ खाना शराकत रहना फराकत। २८ खोदा पहाड़ पर निकली चुहिया। २६ गाय न बाछी नींद आवे आछी। ३० गाँवका जोगी जोगड़ा अनगावाँ का सिद्ध। ३१ गुरु तो गुड़ ही रहे, चेला हो गये चीनी। ३२ गुरु कीजै जान, पानी पीजै छान। ३३ घरकी मुरगो दाल बराबर। ३४ घरमे चूहे दण्ड करते है। ३५ घडीमें घर छूटे, नव घड़ी भद्रा। ३६ चमडी जाय पर दमडी नही जाय। ३७ चार दिनोकी चाँदनी, आखिर अन्धेरी रात। ३८ चोरकी दाढ़ीमें तिनका। ३६ चौबे गये छब्बे बनने, दूबे होकर आये। ४० छछुन्दरके सिरमें चमेलीका तेल। ४१ छठीका दूध जवान पर आ गया। ४२ चन्दन का चुटका भला, गाडी भरा न काठ। ४३ झगड़े की जड़ जर जमीन जोरू। ४४ जहा जाय भूखा, वहाँ पड़े सूखा। ४५ जर है तो नर हैं, नहीं तो पूरा खर है। ४६ जाकर जापर सत्य सनेहू। सो तिहि मिलत न कछु सन्देहू। ४७ जाके पाय न फटी बेवाई। सो क्या जाने पीर पराई। ४८ जिसकी लाठी उसकी भैस। ४६ जिसको पिया चाहे, वही सुहागिन। ५० जिसके हाथ लोई, उसका सब कोई। ५१ जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ। ५२ जैसी तेरी कोमरी तैसी मेरी गीत। ५३ जैसे नागनाथ वैसे ही साँपनाथ। ५४ जैसी बहै बयार पीठ तब तैसी कीजै। ५५ जो तोकों काँटा बुवै ताहि बोय तू फूल। ५६ जब ओढ लीनी लोई, तब क्या करेगा कोई। ५७ डूबा वंश कबीरका उपजे पूत कमाल ५८ तीन बुलाये तेरह आये। ५६ तीन लोकसे मथुरा न्यारी। ६० तेलीका तेल जले, मसालचीका सिर दुखे। ६१ तुरत दान महाकल्यान। ६२ दाल-भातमें मूसरचन्द। ६३ दिलको करार तब सूझे त्यौहार। ६४ दूरके ढोल सुहावने। ६५ दूधका जला छाछ-को फूक २ कर पीता है। ६६ दोबिधामें दोऊ गये माया मिले न राम। ६७ धोबीका कुत्ता घरका न घाटका। ६८ न रहे बाँस न बाजे बासुरी। ६६ नदीमें रहकर मगरसे वैर। ७० न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी। ७१ नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज। ७२ नाचे न जाने आँगन टेढ़। ७३ नव नगद न तेरह उधार। ७४ नव दिन चले अढ़ाई कोस। ७५ नव सो चूहे खाय बिलाई हज्जको चली। ७६ पढ़े न लिखे, नाम विद्यासागर। ७७ पराधीन सुख सपने नाहीं। ७८ बकरेकी माँ कब तक खैर मनावेगी।

७९ बन्दर क्या जानें अदरखका स्वाद । ८० बार बार चोरकी तो, एक बार साहकी । ८१ बाहरवाले खा गये, घरके गावें गीत । ८२ वृद्धा वेश्या तपस्विनी । ८३ बाँह गहेकी लाज । ८४ बिल्ली खायगी नहीं तो, लुढका तो देगी । ८५ बाँझ क्या जाने प्रसूतिकी पीडा । ८६ भैंसके आगे बेन बजावे भैंस रही पगुराय । ८७ मुखमें राम बगलमें छूरी । ८८ मरता क्या न करता । ८९ मन चङ्गा कठवतीं गङ्गा । ९० मान न मान मैं तेरा मेहमान । ९१ मीठा २ गप २ कड़वा २ थू थू । ९२ यथा राजा तथा प्रजा । ९३ रस्सी जल तो गई पर ऐंठ न गई । ९४ रामभरोसे जो रहे पर्वत पर हरियाय । ९५ रोगका घर खांसी लड़ाईका घर हँसी । ९६ रांड, सांड, सीढी, संन्यासी इनसे बचै तो सेवै काशी । ९७ रङ्गमें भङ्ग । ९८ लकीरके फकीर । ९९ कमजोरकी जोरू, सबकी भौजाई । १०० लातोंके देव बातोंसे नहीं मानते । १०१ लीक २ गाडी चलै लीकहि चलै कपूत । लीक छाँडि तीनों चलें, सायर, सिंह, सपूत । १०२ सूत न कपास जुलाहेसे धींगा धींगी । १०३ दाना न घास दोनों शाम खरहरा । १०४ खेले कूदे होय खराब, पढ़े-लिखे होय नवाब । १०५ टकेकी मुर्गी नो छटांक महसूल । १०६ करनी न करतूत, लडनेको मौजूद । १०७ आधे माघे कमली कांधे । १०८ बड बड़ घोड़े बहे जाँय, गदहा पूछे कितेक पानी ।

—:*:—

उपदेश

१ "परहित बश जिनके मनमाहीं, तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।"

२ "अगर चाहो वशी करना जगत् को, काम एकेसे ।
निवारो बात-गैया को पराये दोष-घासेसे ।"

३ "नहीं जिस जाति में कुछ मातृभाषाकी महत्ता है,
नहीं के ही बराबर इस जगतमें उसकी सत्ता है ।"

४ "सूक्षम भोजन कीजिये, रहिये ना पड़ सोय,
जल थोड़ा सा पीजिये, बहुत बोल मति खोय ।"

५ 'तुलसी देखि सुबेख भूलहिं मूढ़ न चतुर नर,
सुन्दर केकहि पेख बचन सुधासम अशन अहि ।"

६ "ब्रह्म मुहूरतमें सदा करें बिस्तरा त्याग,
निरालस्य घर धन धरै, चिरजीवे बेदाग।"
७ "देशाटन राजा सभा साधु जननके संग।
शास्त्र-कला शास्त्रार्थ ये पांच चतुरता अंग।"
८ "उद्यम कबहु न छाड़िये पर आशा के मोद,
साहस घर लक्ष्मी बसे, मूढ़ भाग्यके गोद।"
९ "मति बिगरत जीवन घटत होत आलसी, हीन,
करिय नीच सहवास नाहिं ज अघकाय मलीन।"
१० "होत सुसंगति सहज सुख, दुख कुसंग के खान,
गन्धी और लुहारकी देखो बैठि दूकान।
तुलसी साथी बड़नके विद्या, विनय, विवेक,
साहस, सुकृती, सत्यव्रत, रामभरोसा एक।
स्वाति बूँद सीपी मुकुत कदली होत कपूर,
कालेके मुख विष बढ़ै संगति सोभा सूर।"
११ "लाभ न होइ हैं कपट सों जो कीजै व्योहार,
जैसे हाड़ी काठकी चढ़ै न दूजी बार।"
१२ "उन्नति अरु अवनति लहै खल थोरे ही माय,
तुला यष्टि जिमि थोर ही ऊँच नीच होइ जाय।"
१३ "सात दीप अरु खंड नव मन्दिर मेरु पहार,
शेषहि इतो न भार है जितो कृतघ्नी भार।"

१४ अच्छी आदतें सीखो और सदा उनपर ध्यान रखो।

१५ सब प्रकारके नशोंसे सदा दूर रहो।

१६ सबका प्रेमपूर्वक अभिनन्दन करो।

१७ अपना उत्साह भङ्ग न होने दो।

१८ अगर तुम अच्छा बनना चाहते हो तो, तुम्हारा दोष कोई बतावे, उसे धन्यवाद दो और उस दोषको उसी समयसे छोड़नेके लिये कटिबद्ध हो जाओ।

१९ हृदयमें बुरे विचार कभी न फटकने दो।

२० कभी किसी दशामें भी झूठ न बोलो।

२१ "निज भाव, भाषा, भेषका रखना सदा ही ध्यान,
होना न नक्काले न खोना देशका अभिमान।"

२२ "जिसको न निज गौरव तथा निज देशका अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है।"

—— :*: ——

उपसंहार

जगत्‌की सारी भाषाओंके विद्वानोंने इस बातको एक स्वरसे स्वीकार किया है कि, पहले भाषा है, फिर व्याकरण है अर्थात् व्याकरण भाषाका पीछा भले ही कर सकता है; पर भाषा व्याकरणका पीछा नहीं कर सकती। इसलिये व्याकरणका उतना ही अंश जानना आवश्यक है, जिससे भाषाके शुद्धाशुद्ध रूपोंका ज्ञान हो सके और भाषा यथासाध्य एक सीमा तक रह सके। आजकल लोग अङ्ग-रेजीकी नकल करके उसे व्याकरणके बोझसे ही दबा देते हैं। व्याकरणकी पुस्तकोंमें देखिये तो, पन्नेके पन्ने विषय-सूची से भरे हुए हैं। अपनी अपनी मनगढ़न्त कल्पनाओंके आधार पर अनेक विषय लोग बना लेते हैं और उन्हींसे अपनी

पुस्तकोंको भर देते हैं। ये सब बातें मैंने व्यर्थ समझकर इस छोटीसी पुस्तकमें छोड़ दी हैं। जैसे, हिन्दीमें सन्धिकी कोई ऐसी आवश्यकता नहीं कि, उसीसे पुस्तकको भर दें; और, अव्यय भी कोई ऐसा विषय नहीं है कि, उसे पुस्तकमें स्थान दिया जाय। यही कारण है कि, मैंने वाक्य-विश्लेषण (Analysis) इत्यादि विषयोंको भी छोड़ दिया है। विशेषतः मेरा तात्पर्य्य यही है कि, इस पुस्तकके पाठक थोड़े ही कालमें और थोड़े ही परिश्रमसे विशुद्ध हिन्दी बोलना और लिखना सीख लें। इसी कारणसे मैंने अत्यन्त उपयोगी विषयोंका ही उल्लेख किया है। ज्यादा विषय बढ़ानेके ऊपर मैंने ध्यान नहीं दिया है। प्रत्येक मनुष्यको कुछ छन्दका ज्ञान भी आवश्यक है; अतः अन्तमें आवश्यकीय छन्दोंका भी मैंने उल्लेख कर दिया है।

उच्चारणमें भी कम गड़बड़ी नहीं है। दाक्षिणात्योंके सिवा और देशके उच्चारणमें प्रायः बहुत गड़बड़ है। जैसे, बङ्गाली लोगोंका उच्चारण और पंजाबियोंका उच्चारण एकदम बिगड़े हुए ढँग पर होता है। इसका कारण यद्यपि उन देशोंका जल-वायु है; पर इसके साथ ही उनकी लापरवाही भी कम नहीं है। यही हालत मध्यभारतीयोंकी भी है। इनकी लापरवाही और ब्रजभाषाका अत्यन्त प्रचार होना, इन दोनोंने मिलकर शब्दोंके उच्चारणमें बहुत भेद डाल दिया है। जैसे,—स, श, ष; व, ब; य, ज; इनका उच्चारण ऐसी लापरवाहीसे होता है, जिससे मुखाग्र लेखमें विद्यार्थी प्रायः बहुतसी भूलें किया करते हैं; और, यही आदत भी पड़ी रहती है, जिससे आगे भी चल कर वे शब्दोंके लिखनेमें भूलें करते हैं।

यूनिवर्सिटीकी रिपोर्टमें प्रायः प्रत्येक साल इस बातकी

शिकायत रहती है। अतः इसके ऊपर यहाँके सब विद्वानों और छात्रोंको ध्यान देना आवश्यक है। अक्षरोंके उच्चारणके लिये तो, स्थान नियत हैं। उनको इन्हीं स्थानोंसे उच्चारण करना चाहिये। जैसे,—

"अ, ह, कवर्ग कण्ठ्य हैं, ल, स, तवर्ग दन्त्यः
ओष्ठ्य ऊ, पवर्ग, ई, चवर्ग, य, श, तालव्य।
तालव्य-कण्ठ्य ए, ऐ, वकार दन्त्य-ओष्ठ्यः
वर्ग पञ्चमों कि नासिका, ओ, औ, है कण्ठ्य-ओष्ठ्य।"

दन्त्य 'स' के उच्चारणमें ऊपर-नीचे दाँतोंको मिला देना चाहिये और जीभको दाँतोंमें सटा देना चाहिये। तालव्य 'श' के उच्चारणमें जीभको तालुमें मिला देना चाहिये और 'ष' के उच्चारणमें जीभको मूर्धा में मिला देना चाहिये। 'ब' के उच्चारणमें ओठोंको मिलाते हैं और 'व' के उच्चारणमें ऊपरके दाँतोंसे नीचेके ओठको दबा देते हैं। किस शब्दमें व है और किस शब्द-में ब है, इस भेदके लिये एक संस्कृतमें पद्य है:—

"उद्गौ यत्र विद्येते, यो वः प्रत्ययसन्धिजः।
अन्तःस्थं तं विजानीयात् तदन्यो वर्ग उच्यते।"

जिसका संप्रसारण होता है, जो वकार प्रत्यय या सन्धिका है, उसे अन्तःस्थ और दूसरे वकारको वर्गीय समझना चाहिये। यही 'य' और 'ज'के उच्चारणमें भी है। 'य' के उच्चारणमें मुँह चलाना पड़ता है और 'ज' के लिये सिर्फ जीभको तालुसे सटा देते हैं। आजकल 'ज्ञ' इस अक्षरका उच्चारण भी बदल गया है। प्राचीन वैदिक शिक्षा-ग्रन्थोंके अनुयायी (आर्य्य) 'ज्' 'ञ्' का फरक २ उच्चारण करते हैं और संस्कृतके अर्वाचीन तथा प्राचीन, सभी ग्रन्थोंको एकसे प्रमाण मानने वाले 'ग्' 'ञ' अक्षर उच्चारण

करते हैं! कहनेका तात्पर्य है कि, जिस भाषाको आप बोलें, उसका उच्चारण उस भाषाके अनुसार ही ठीक २ होना चाहिये।

—o:*:o—

Glossary. (शब्दसंग्रह)

अक्षर—Letter
स्वर—Vowel
व्यञ्जन—Consonant
संयुक्त अक्षर—Compound letter
ह्रस्व—Short
दीर्घ—Long
सन्धि—Joining
अनुस्वार—Nasal
गद्य—Prose
पद्य—Poetry
मिश्र-वाक्य—Complex
वाक्यविश्लेषण—Analysis
चिह्न-विचार—Punctuation
अल्प विराम—Comma
अर्द्ध विराम—Semicolon
न्यून विराम—Colon
पूर्ण विराम—Fullstop
प्रश्नचिह्न—Note of Interrogation
त्रुटि—error
विस्मयादिसूचक चिह्न—Admiration
योजक—Hyphen
आदेशक—Dash
उद्धरण-चिह्न—Inverted Comma
बन्धनी—Bracket
वक्रांकुश—Brace
लोप-चिह्न—Mark of Ellipsis
कण्ठ्य—Gutturals
तालव्य—Palatals
मूर्धन्य—Languals
दन्त्य—Dentals
ओष्ठ्य—Labials
भाग—Divide
जोड़—Pluss
घटाव—Minuss
गुणा—Multiply

काल—Tense
जातिवाचक—Common noun
व्यक्तिवाचक—Proper noun
भाववाचक—Abstract noun
लिङ्ग—Gender
पुँल्लिङ्ग—Masculine
स्त्रीलिङ्ग—Feminine
नपुंसक—Neuter
एकवचन—Singular
द्विवचन—Dual
बहुवचन—Plural
वचन—Number
रूप-साधन—Declension
क्रिया—Verb
अकर्मक—Intransitive
सकर्मक—Transitive
भूत—Past
भविष्य—Future,
वर्तमान—Present
सामान्य—Indefinite Past
आसन्न—Present perfect
पूर्ण—Past perfect
अपूर्ण—Continuous Past
सन्दिग्ध—Doubtful past
हेतुहेतुमद्भूत—Conditional Past
विधि—Imperative
सम्भावना—Optative
छन्द—Prosody
कर्तृवाच्य—Active Voice
कर्मवाच्य—Passive Voice
वाच्य-परिवर्तन—Change of Voice
प्रधानकर्म—Direct object
गौण कर्म—Indirect object
प्रेरणार्थक क्रिया—Causal Verb
संयुक्त-क्रिया—Compound Verb
धातु—Root
सम्बन्धवाचक—Preposition
समुच्चयवाचक—Conjunction
इङ्गितबोधक—Interjection
उपसर्ग—Prefix
समास—Compound
अव्ययीभाव—Adverbial Compaund
तत्पुरुष—Determinative Compound
द्विगु—Numeral Compound

द्वन्द्व—Copulative Compound
बहुव्रीहि—Relative Compound
विग्रह—Expounding
तद्धित—Nominal Affixes
कृदन्त—Verbal Affixes
मुखाग्र लेख—Dictetion
संकीर्ण—Compound Sentence
असंकीर्ण—Simple Sentence
निराश्रय—Indepeudent Clause
आश्रित—Dependent Clause
संज्ञा-वाक्य—Noun Clause
विशेषण-वाक्य—Adjective Clause
पदव्याख्या—Parsing
व्याकरण—Grammar
संज्ञा—Substantive
अव्यय—Indeclinable
उद्देश्य—Subject
विधेय—Predicate
कारक—Case
कर्त्ता—Nominative
कर्म—Objective
करण—Instrumental
सम्प्रदान—Dative
अपादान—Ablative
सम्बन्ध—Genitive
अधिकरण—Locative
सम्बोधन—Vocative
विस्तार—Extension
विशेषण—Adjective,
क्रिया-विशेषण—Adverb
पुरुष—Person
प्रथम—Third
मध्यम—Second
उत्तम—First
सर्वनाम—Pronoun
पुरुषवाचक—Personal
निश्चयवाचक—Definite demonstrative
अनिश्चय-वाचक—Indefinite demonstrative
सम्बन्ध-वाचक—Conective
प्रश्नवाचक—Interrogative

—o:*:o—